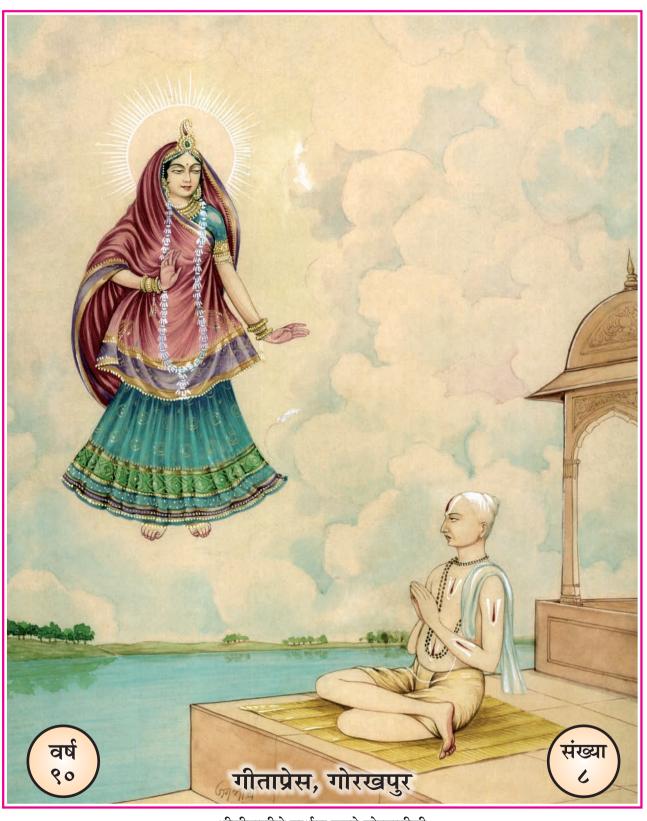
कल्याणा

मल्य ८ रुपये



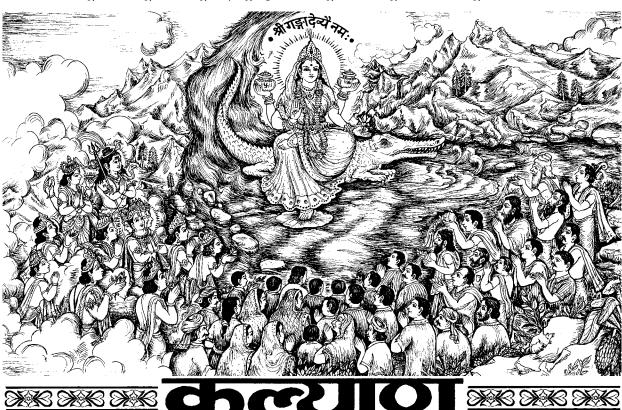
श्रीसीताजीसे प्रार्थना करते गोस्वामीजी





श्रीकृष्णको गोकुल ले जाते वसुदेव

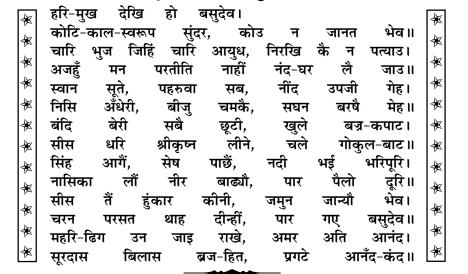
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः। नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्ये नमोऽस्तु ते॥ नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्ये ते नमो नमः। सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥

वर्ष १० गोरखपुर, सौर भाद्रपद, वि० सं० २०७३, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, अगस्त २०१६ ई० पूर्ण संख्या १०७७

श्रीकृष्णकी गोकुल-यात्रा



कल्याण, सार भाद्रपद, वि० स० २०७३	, श्रीकृष्ण-सं० ५२४२, अगस्त २०१६ ई०
विषय-सूची	
विषय पृष्ठ-संख्या	विषय पृष्ठ-संख्या
२- कल्याण	(श्रीअनुपमजी मिश्र) २६ १३- साधन-सूत्र (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) २५ १४- शरणागतवत्सल [श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग] (आचार्य श्रीरामरंगजी) २८ १५- स्नेह और रक्षाका पर्व—रक्षाबन्धन (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी) ३६ १६- आगमोंका स्वरूप और वैखानस-आगम (डॉ० श्रीबसन्तबल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०) ३६ १७- बलात्कारके समय क्या करें ? (महात्मा गांधी) ३६ १८- सतीका शाप [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] ३६ १८- गोहत्यामें निमित्त बननेका परिणाम ४६ २०- ब्रतोत्सव-पर्व [भाद्रपदमासके व्रतपर्व] ४६ २१- साधनोपयोगी पत्र ४६ २२- कृपानुभूति ४६
(श्रीजशवन्तराय जयशंकर हाथी)२२ ———•	ि २४- मनन करने योग्य
१- श्रीसीताजीसे प्रार्थना करते गोस्वामीजी (रंगीन) आवरण-पृष्ठ २- श्रीकृष्णको गोकुल ले जाते वसुदेव (, ,) मुख-पृष्ठ ३- अशोकवाटिकामें श्रीसीताजी (इकरंगा) १०	-सूची ५- श्रीरामकी शरणागतवत्सलता (इकरंगा) २८ ६- रावणको विश्रामका आदेश देते श्रीराम (") २९ ७- जयसिंहको शाप देती सती जस्सो (") ४० ८- भक्त सदन कसाई (")
्र एकवर्षीय शुल्क अजिल्द ₹२०० सजिल्द ₹२२० विदेशमें Air Mail विधिक US	 सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय ।। जय हर अखिलात्मन् जय जय ।। गौरीपति जय रमापते ।। \$45 (₹2700) {Us Cheque Collection Charges 6\$ Extra
आदिसम्पादक —नित्यलीलालीन सम्पादक — राधेश्याम खेमका, सह	द्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़ ि लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित
website: gitapress.org e-mail: kaly	ran@gitapress.org 09235400242/244

संख्या ८] कल्याण निश्चय करो—मीठी और हितभरी वाणी दूसरोंको अर्थ समझनेपर भी जबतक यह समझ रहे हो कि वह आनन्द, शान्ति और प्रेमका दान करती है और स्वयं दूसरे किसीको गाली बक रहा है, तबतक भी दु:ख नहीं आनन्द, शान्ति और प्रेमको खींचकर बुलाती है। होगा। दु:ख तब होगा, जब तुम समझोगे कि गाली मीठी और हितभरी वाणीसे आत्माका पोषण होता मुझको दे रहा है। इसका मतलब यह कि तुम गालीको है, मनको पवित्र शक्ति प्राप्त होती है, बृद्धि निर्मल होती ग्रहण कर रहे हो! है और जीवनकी क्रियाएँ सुचारुरूपसे सुव्यवस्थित रज्जबने कहा है— रज्जब रोष न कीजिये कोई कहो क्यों ही। चलती हैं। मीठी और हितभरी वाणीमें भगवान्का आशीर्वाद हँसकर उत्तर दीजिये हाँ बाबाजी! यों ही॥ उतरता है और उससे अपना-पराया सबका कल्याण होता है। याद रखों—भगवान् मंगलमय हैं, जगत् भगवान्से भरा है अतएव तुम भी मंगलमें ही निवास करते हो। मीठी और हितभरी वाणीमें ही सत्यकी रक्षा होती है और उसीमें सत्यकी शोभा है। जैसे बादलसे सूर्य ढका रहता है और जैसे राखसे याद रखो-मुखसे कभी ऐसा शब्द मत निकालो, आग ढकी रहती है, वैसे ही तुम्हारे अविश्वाससे जो किसीका जी दुखाये और अहित करे। मंगलमय भगवान् ढके हुए हैं। वास्तवमें उनका कडवी और अहितकारिणी वाणी सत्यको नहीं मंगलमय स्वरूप नित्य और सर्वत्र है। प्रत्येक स्थितिमें, प्रत्येक सिद्धि-असिद्धिमें, प्रत्येक बचा सकती और उसमें रहनेवाले आंशिक सत्यका स्वरूप भी बडा कृत्सित और भयानक हो जाता है। चिन्तनमें भगवानुको—उनके मंगलमय स्वरूपको देखो। यह निश्चय करो कि जिसकी जबान गन्दी होती फिर तुम्हें कभी अमंगलके दर्शन नहीं होंगे। तुम है, उसका मन भी गन्दा होता है। मंगलमय भगवानुको भूलकर, मंगलमयी भगवत्कृपाको एक बार महामना मालवीयजीसे किसी विशिष्ट भुलकर—नित्य अमंगलका चिन्तन, अमंगलकी आशंका विद्वान्ने कहा—'आप मुझे सौ गाली देकर देखिये, मुझे और अमंगलका भय करते हो, इसीसे व्यर्थ ही तुम्हारे गुस्सा नहीं आयेगा।' मालवीयजी महाराजने उत्तर सामने नाना रूपोंमें अमंगल आ खडा होता है। वह दिया—'आपके क्रोधकी परीक्षा तो पीछे होगी, मेरा मुँह तुम्हारी ही कल्पनाका है, वास्तवमें नहीं है। तो पहले ही गन्दा हो जायगा।' यह निश्चय करो-मैं सर्वत्र, सर्वथा और दूसरा कोई कडवा बोले, गाली दे तो उसे ग्रहण सर्वदा मंगलसे घरा हूँ, मंगलसे भरा हूँ, मंगलमें डूबा मत करो—तुमपर उसका कोई असर नहीं होगा, तुमपर हूँ, मंगलसे सना हूँ, मंगलसे तना हूँ और मेरे बाहर-तो तभी असर होता है, जब तुम उसे ग्रहण करते भीतर, भूत-भविष्य सभी मंगलसे ओतप्रोत हैं; क्योंकि नित्य मंगलमय भगवान्का मुझमें नित्य निवास है और हो। तुम जिसकी भाषा नहीं समझते, चाहे वह कितनी मैं नित्य मंगलमय भगवान्में स्थित हूँ। ही गाली दे तुम्हें कोई दु:ख नहीं होता; या तुम शब्दका 'शिव'

माता जानकीसे गोस्वामीजीकी प्रार्थना

गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न। बूझिहैं 'सो है कौन', कहिबी नाम दसा जनाइ।

बंदउँ सीता राम पद जिन्हिह परम प्रिय खिन्न॥ सुनत राम कृपालुके मेरी बिगरिऔ बनि जाइ॥

गोस्वामी तुलसीदासजी भगवान् श्रीराम और जगज्जननी जानकी जगजननि जनकी किये बचन सहाइ। जानकीजीके तत्त्वत: ऐक्यका प्रतिपादन करते हुए कहते हैं

कि मैं उन श्रीसीतारामजीके चरणोंकी वन्दना करता हूँ, जिन्हें

आवरणचित्र-परिचयः

दीन अत्यन्त प्यारे हैं तथा जो शब्द और अर्थ एवं जल और

जलकी लहरके समान कहनेमात्रको तो भिन्न हैं, पर तत्त्वत:

भिन्न नहीं हैं। वस्तुत: तुलसीदासजीकी भक्ति राममयी नहीं,

सीताराममयी है; अत: उन्होंने स्थान-स्थानपर श्रीसीतारामजीकी

साथ-ही-साथ वन्दना की है, यथा-सीय राम मय सब जग जानी । करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥

गोस्वामीजीका भक्ति-सिद्धान्त विशिष्टाद्वैतवाद था, उनके

विचारमें ब्रह्म और माया—दोनों सत्य तथा अनादि हैं। इसीलिये उन्होंने ब्रह्म (श्रीराम)-के साथ उनकी शक्तिके

रूपमें माया (श्रीजानकीजी)-की भी वन्दना की है-श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीस माया जानकी। जो सृजित जगु पालित हरित रुख पाइ कृपानिधान की।।

गोस्वामीजीका श्रीजानकीजीके प्रति मातृभाव था। प्रकृतिमें यह सार्वभौमरूपसे देखा जाता है कि माता करुणामयी होती

है, अत: पुत्र अपनी बात माताके सम्मुख ही रखकर उनसे ही पितासे अनुमोदनहेतु कहता है। वैसे ही गोस्वामीजी भी

माता जानकीसे अपनी करुण-कथा निवेदितकर कहते हैं-

हे माता! कभी अवसर हो तो कुछ करुणाकी बात छेड़कर श्रीरामचन्द्रजीको मेरी भी याद दिला देना, इसीसे मेरा काम

बन जायगा। आप उनसे यों कहना कि एक अत्यन्त दीन, सर्व साधनोंसे हीन, मनमलीन, दुर्बल और पूरा पापी मनुष्य

आपकी दासी (तुलसी)-का दास कहलाकर और आपका नाम ले-लेकर पेट भरता है। इसपर प्रभु कृपा करके पूछें कि वह

कौन है, तो मेरा नाम और मेरी दशा उन्हें बता देना। कृपालु रामचन्द्रजीके इतना सुन लेनेसे ही मेरी सारी बिगडी बात बन

जायगी। हे जगज्जननी जानकीजी! यदि इस दासकी आपने इस प्रकार वचनोंसे ही सहायता कर दी तो यह तुलसीदास

आपके स्वामीकी गुणावली गाकर भवसागरसे तर जायगा— कबहँक अंब, अवसर पाइ। मेरिऔ सुधि द्याइबी, कछु करुन-कथा चलाइ॥

दीन, सब अँगहीन, छीन, मलीन, अघी अघाइ। Hinduish भे अंडहरु रहा है से स्वापन स्थापन स्यापन स्थापन स्यापन स्थापन स्थापन

तरै तुलसीदास भव तव नाथ-गुन-गन गाइ॥ एक अन्य पदमें भी वे श्रीसीताजीसे प्रार्थना करते हुए कहते हैं — हे जानकीमाता! कभी मौका पाकर श्रीरामचन्द्रजीको

मेरी याद दिला देना। मैं उन्हींका दास कहाता हूँ, उन्हींका नाम लेता हूँ, उन्हींके लिये पपीहेकी तरह प्रण किये बैठा हूँ, मुझे

उनके स्वाती-जलरूपी प्रेमरसकी बड़ी प्यास लग रही है। यह तो आप जानती ही हैं कि करुणानिधान रामजीका स्वभाव बडा

सरल है; उन्हें अपना गुण, शत्रुद्वारा किया हुआ अनिष्ट, दासका अपराध और दिये हुए दानकी बात कभी याद ही नहीं रहती। उनकी आदत भूल जानेकी है; जिसका कहीं मान नहीं होता,

उसको वह मान दिया करते हैं; पर वह भी भूल जाते हैं। हे माता! तुम उनसे कहना कि तुलसीदासको न भूलिये; क्योंकि उसे मन, वचन और कर्मसे स्वप्नमें भी किसी दूसरेका आश्रय

कबहुँ समय सुधि द्यायबी, मेरी मातु जानकी। जन कहाइ नाम लेत होंं, किये पन चातक ज्यों, प्यास प्रेम-पानकी।। सरल कहाई प्रकृति आपु जानिए करुना-निधानकी।

नहीं है-

तुलसीदास न बिसारिये, मन करम बचन जाके, सपनेहुँ गति न आनकी।।

जिस समय गोस्वामीजी काशीमें अस्सीघाटपर रह रहे थे,

एक दिन रातमें कलियुग मूर्तरूप धारणकर उनके पास आया

बिसारनसील

और उन्हें त्रास देने लगा। गोस्वामीजीने हनुमान्जीका ध्यान किया और हनुमान्जीने उन्हें विनयके पद रचनेके लिये कहा।

निजगुन, अरिकृत अनिहतौ, दास-दोष सुरति चित रहत न दिये दानकी।।

है

मानद

अमानकी।

इसपर गोस्वामीजीने विनय-पत्रिकाकी रचनाकर उसे भगवान्के चरणोंमें समर्पित कर दिया। श्रीहनुमान्जी, भरतजी, लक्ष्मण

और शत्रुघ्नजीने उसपर हस्ताक्षर करनेके लिये प्रभुसे निवेदन किया। सबकी बात सुनकर श्रीरामजीने मुसकराकर कहा कि मुझे उसकी सब खबर मिल गयी है। तात्पर्य है कि

श्रीजनकनन्दिनीजीने पहलेसे ही तुलसीदासजीकी स्थितिकी सूचना

प्रभुको दे दी थी और उनके अनुमोदनपर रघुनाथजीने विनय-पत्रिकापर अपनी सही कर दी।

इस प्रकार माता जानकीसे प्रार्थना करनेपर गोस्वामीजीको

८ कल्ल	गण [भाग ९०
<u> </u>	<u> </u>
१८-जो पुरुष प्रत्येक जीवको अपना प्रिय भाई मानकर	२७-सम्पूर्ण संसारके प्राणियोंमें एक मनुष्य ही
सबका हित चाहता हुआ सबके साथ यथायोग्य सद्व्यवहार	ऐसा प्राणी है, जो प्राणिमात्रकी सेवा कर सकता है।
करता है, परमपिता परमेश्वर स्वाभाविक ही उसपर प्रसन्न	२८-किसीके साथ जो प्रेम करना है, वह भगवान्के
होते हैं और सारे भाई भी उससे प्यार करते हैं।	साथ ही प्रेम करना है। इस प्रकारके प्रेमपूर्ण व्यवहारके
१९-ये सब चराचर प्राणी हमारे भाई ही नहीं हैं,	प्रभावसे हम भगवान्के परम प्रिय बन जायँगे।
अपितु इनके हृदयमें हमारे परम पूजनीय इष्टदेव परमेश्वर	२९-प्रेम करनेवालेको प्रेम मिलता है और द्वेष
विराजमान हैं। वे ही इनके रूपमें प्रकट हो रहे हैं। इस	करनेवालेको द्वेष।
नातेसे इन्हें सुख पहुँचाना परमेश्वरको सुख पहुँचाना है	३०-सबसे प्रेम बढ़ाइये। मेरे द्वारा दूसरेका हित
और इन्हें दु:ख देना परमेश्वरको दु:ख देना है।	कैसे हो, निरन्तर यही बात सोचते रहना चाहिये।
२०-मनुष्यकी तो रचना ही की गयी है सब	३१-चराचर ब्रह्माण्ड ईश्वर है, सबको उसकी
जीवोंके यथायोग्य पालन और संरक्षणके लिये। वही	सेवा करनी चाहिये, उसकी सेवा ही ईश्वरकी सेवा है,
यदि इन्हें मारनेपर उतारू हो जायगा तो फिर इनको कौन	संसारको सुख पहुँचाना ही परमात्माको सुख पहुँचाना है।
पालेगा और ये कैसे जी सकेंगे?	३२–परमात्मा समस्त भूतोंकी आत्मा हैं, सर्वव्यापी
२१-मनुष्यमात्रका यह परम कर्तव्य है कि वह	और सर्वान्तर्यामी हैं, इसलिये सबकी सेवा भगवान्की ही
प्राणपणसे ऐसी ही चेष्टा करे; जिसमें सब चराचर	सेवा है।
जीवोंका परम हित हो।	३३-यह नियम ले लें कि शरीरसे वही कार्य
२२-किसी हालतमें किसीका किसी प्रकारसे अहित	निष्कामभावके साथ किया जायगा, जिससे दूसरेका
करना ही ईश्वरके कानूनके विरुद्ध कार्य करना है।	उपकार हो। इसके समान कोई भी धर्म नहीं है। भगवान्
२३-दूसरोंको कष्ट पहुँचाना अपने ही आत्माको	श्रीरामचन्द्रजीने कहा है—
कष्ट पहुँचाना है; क्योंकि अपने आत्माके अतिरिक्त और	परहित सरिस धरम नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥
कुछ है ही नहीं।	—इस नियमको धारण कर लेनेसे भी संसारसे
२४-मनुष्य यदि किसीको दु:ख दे रहा है तो वह	मुक्ति हो जाती है।
वस्तुत: प्रकारान्तरसे अपनेको ही दे रहा है और यदि	३४-दूसरोंका उपकार करनेकी आदत डालनी
	चाहिये, यह बड़े महत्त्वकी बात है कि अपनेसे किसीका
पहुँचा रहा है।	उपकार बन जाय, किंतु वह उपकार होना चाहिये
२५–जो मनुष्य दूसरोंसे घृणा, द्वेष और वैर करता	उदारता और दयाबुद्धिसे।
है अथवा उनके अनिष्टकी इच्छा करता है, वह	३५-सबसे बढ़िया बात क्या है? अपने साथ जो
मनुष्यत्वसे तो गिरा हुआ है ही, सच पूछिये तो पशुओंसे	बुराई करे, उसके साथ भी भलाई करे।
भी गया–गुजरा है।	३६-धन-सम्पत्ति, शारीरिक सुख और मान, बड़ाई,
२६–मनुष्यका शरीर खान–पान, ऐश–आराम और	प्रतिष्ठा आदिको न चाहते हुए ममता, आसक्ति और
भोग भोगनेके लिये नहीं मिला है। ये सब तो अन्य	अहंकारसे रहित होकर मन, वाणी, शरीर और धनके
योनियोंमें भी प्राप्त हो सकते हैं। मनुष्यका जन्म तो	द्वारा सम्पूर्ण प्राणियोंके हितमें रत होकर उन्हें सुख
प्राणिमात्रके हितकी चेष्टा करनेके लिये ही मिला है।	पहुँचानेकी चेष्टा करना 'सेवा-साधन' कहलाता है। इस
अतएव सब लोगोंको चाहिये कि अपने तन, मन और	साधनसे साधकके चित्तमें निर्मलता और प्रसन्नता होकर
धनद्वारा नि:स्वार्थभावसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी सेवाके लिये	
तत्परतासे चेष्टा करें।	३७-प्यासेको पानी, नंगोंको वस्त्र, बीमारको औषध

संख्या ८] परोप	कार ९
*********************************	******************************
और आतुरको अभयदान आदि सेवाके साधन हैं।	देना भी सेवा ही है। सेवा रत्नोंकी ढेरी है। उसे लूटनेकी
३८-सेवा-साधना तीन प्रकारके भावोंसे की जा	चीज समझकर खूब लूटना चाहिये।
सकती है—सब एक ईश्वरकी ही संतान होनेके कारण	५०-कोई भी नीचा काम—जैसे पैर धुलाना, हाथ
सबको अपना 'बन्धु' मानते हुए, आत्मदृष्टिसे सबको	धुलाना, पत्तल उठाना आदि मिल जाय तो समझना
अपना 'स्वरूप' समझते हुए और परमात्मा ही सब	चाहिये कि भगवान्की विशेष दया है।
भूतोंके हृदयमें स्थित है इसलिये सबको साक्षात् 'परमेश्वर'	५१-यदि किसी बीमारकी टट्टी-पेशाब उठानेको
समझते हुए। इन तीन भावोंमें उत्तरोत्तर श्रेष्ठता है।	मिल जाय, तब तो भगवान्की पूर्ण दया समझनी चाहिये।
३९-ममता, आसक्ति और अहंकारसे रहित होकर	५२-सेवा-कार्यमें जितना उच्च भाव रखा जा सके
नि:स्वार्थभावसे की हुई थोड़ी सेवा भी अधिक मूल्यवान्	रखना चाहिये। यदि सेवा-कार्यको साक्षात् परमात्माकी
होती है।	सेवा समझा जाय, तब तो कहना ही क्या है? उससे
४०-उत्तम देश, काल और पात्रके प्राप्त होनेपर	परमात्मा बहुत जल्दी मिल सकते हैं।
जो न्यायानुकूल सेवा की जाती है, वही सेवा महत्त्वपूर्ण	५३-नर-सेवाको नारायणकी सेवा बनाना सेवकके
होती है।	हाथकी बात है।
४१-सेवा-साधनमें क्रियाकी अपेक्षा भावकी प्रधानता	५४-किसीकी सेवा या किसीका उपकार करके
है।	उसे कहना नहीं चाहिये; क्योंकि अपने उपकारोंको प्रकट
४२-अपनेसे जो बड़े हैं, पूज्य हैं, दुखी हैं, लाचार	करनेसे अभिमानकी वृद्धि होती है और अभिमानको कोई
हैं, उनकी सेवाका और भी अधिक महत्त्व है।	भी सहन नहीं कर सकता।
४३-कोई भी मिल जाय, उसे देखकर प्रसन्न होना	५५-सेवक होकर यदि अपने सेवाकार्यको गिना दे,
चाहिये। सबसे मीठा वचन बोलना चाहिये। प्रेमका व्यवहार	उसका अहसान कर दे तो उस सेवाकी कीमत वहीं घट
करना चाहिये। अपनी दृष्टिसे सबको भगवान्का स्वरूप	जाती है—निष्कामभावमें कलंक लग जाता है।
समझना चाहिये। सेवा भी इसी भावसे करनी चाहिये।	५६–जरा–सी खटाई पड़ जानेपर जिस प्रकार दूध
४४-सेवाका इतना भारी प्रभाव है कि उससे	एकदम फट जाता है, उसी प्रकार उत्तम सेवारूप दूधमें
भगवान् अपने-आप मिल सकते हैं। इसलिये तन-मन-	अहंकारपूर्ण वचनकी खटाईके पड़ जानेपर वह सारी
धनसे दीन-दुखियोंकी, माता-पिता आदि सभी गुरुजनोंकी	सेवा व्यर्थ हो जाती है।
सेवा करनी चाहिये।	५७-अपने उत्तम कर्मोंको गिना देनेसे वे कर्म
४५-हमें भगवान्ने रुपये, भोग-पदार्थ, ऐश्वर्य आदि	सर्वथा व्यर्थ हो जाते हैं।
जो कुछ भी दिया है, वह यदि किसी प्रकार भी दूसरोंकी	५८-हमें भजन, ध्यान, सेवा, पूजा और परोपकारादि
सेवामें लगे तो अपना अहोभाग्य समझना चाहिये।	उत्तम कर्म करने चाहिये तथा उनका बखान अपने मुँहसे
४६-कहीं भी सेवाका अवसर मिल जाय तो	कभी नहीं करना चाहिये।
समझना चाहिये कि असली धन मिल गया।	५९–कहते हैं, किसी दानीके दानकी प्रशंसा की
४७-सेवाके दो साधन—दाम और काम—बड़े	गयी तो वह रोने लगा। उससे रोनेका कारण पूछा गया
महत्त्वके हैं। एकमें ऐश्वर्यका त्याग है, दूसरेमें शारीरिक	तो वह बोला—'धन उसका, देनेवाला वह, मैं तो केवल
परिश्रम है।	निमित्तमात्र हूँ। लोग मुझे दानी कहते हैं, भला मैं प्रभुके
४८-सेवाका काम मिल गया तो ऐसी प्रसन्नता	सामने क्या मुँह दिखाऊँगा?'
होनी चाहिये मानो राम मिल गये।	६०-जो सच्चे दानी होते हैं, उन्हें तो दान देनेका
४९-सेवाके कई स्वरूप हैं। दूसरोंको मान-बड़ाई	कोई अभिमान ही नहीं होता।
	>+

सर्वकल्याणकारी वेद (ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज) वेदाध्ययन आचार्यपूर्वक ही है। जैसे गुरुओंने सान्त्वयितुं मया

वाक्यमर्थवत्।

अध्ययन किया है, वैसे ही अध्येता अध्ययन करना नान्यथेयमनिन्दिता॥' (वा०रा० ५।३०।१९) यदि मैं चाहते हैं। स्वतन्त्र पहला कोई भी वेदोंका अध्येता नहीं ब्राह्मणकी तरह संस्कृता वाक् बोलूँगा, तब तो मुझे रावण

है। कोई भी वेदोंका कर्ता निश्चित नहीं है, प्रत्युत वेदोंकी नित्यता सिद्ध होती है। इस तरह वेदोंकी ही

शास्त्रता एवं मान्यता सिद्ध है। वेद ही सार्वदेशिक कहे जा सकते हैं; क्योंकि वे

किसी देशविशेषकी भाषामें नहीं हैं। जैसे परमेश्वर सर्वसाधारण है, वैसे ही उसका वेद भी सर्वसाधारणकी

भाषामें ही है। अन्यान्य धर्मग्रन्थ भिन्न-भिन्न देशोंकी भाषाओंमें हैं। कहा जा सकता है कि वेद भी तो आर्योंकी संस्कृत मातृभाषामें ही है, फिर वे ही कैसे सार्वदेशिक हो सकते हैं? परंतु यह कहना संगत नहीं

है; क्योंकि संस्कृत भाषा वेदभाषा है, मानुषी भाषा नहीं। इसीलिये वाल्मीकीय रामायणके सुन्दरकाण्डमें संस्कृता

वाक्का मानुषी वाक्से पृथक् उल्लेख है। श्रीहनुमान्जी सोचते हैं कि मुझे अवश्य ही मानुषी वाक् बोलनी

इसके अतिरिक्त वेद देवभाषा संस्कृता वाक्में भी नहीं है, इसीलिये शब्दोंके लौकिक तथा वैदिक दो प्रकारके संस्कार होते हैं। लौकिक संस्कार लोक तथा

समझकर श्रीमती सीता माता भयभीत होंगी—'यदि

वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम्। रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति॥' (वा॰रा॰

५।३०।१८) द्विजातियोंकी भी संस्कृत निजी भाषा नहीं किंतु देवभाषा ही है। ब्राह्मण शब्दशास्त्राभ्यासी

होनेके कारण ही संस्कृता वाक् बोलते थे। इसलिये

'नैषध' में यह लिखा है कि भिन्नदेशीय राजाओंके

संस्कृतभाषा बोलनेके कारण देवताओंकी पहचान नहीं

वेद दोनोंमें ही बराबर है। वे व्याकरणादि सूत्रोंके ही अनुसार होते हैं। इसीलिये शाब्दिकोंका कहना है—

हुई—'सौवर्गवर्गी न नरैरचिह्नि।'

'छन्दिस दृष्टानुविधिः' छन्दमें दृष्ट लक्ष्यके अनुसार ही संस्कार मान्य है। व्याकरणमें वैदिकी प्रक्रिया पृथक् है, अतः वहाँ लक्ष्यका ही प्राधान्य है, संस्कारका नहीं। वैदिक मन्त्र शब्द, स्वर और छन्दोंसे नियन्त्रित होते हैं, लौकिक नहीं। वैदिक वाक्योंका स्वरूप और अर्थ निरुक्त एवं प्रातिशाख्यसे ही नियमित हैं, संस्कृत वैसी नहीं है।

इसीलिये वेद किसीके पक्षपाती नहीं हैं। जैसे भगवान् सर्वत्र समान हैं, वैसे ही उनका वैदिक धर्म भी साक्षात् या परम्परया प्राणिभावका परम

अतः वेदभाषा संस्कृतभाषासे भी विलक्षण है। यह दूसरी बात है कि उसके साथ कुछ तुल्यता अधिक मिल जाय।

उपकारी है, परंतु पूर्वकथानुसार अधिकारविशेषका निर्णय चाहिये, दूसरी तरहसे महाभागा श्रीजानकीको समझाया इनका असाधारण गुण है। जैसे कोई औषधि किन्हींके ्रासीं indujism Discord Server https://dsc-qq/dharma र्स MADE VUTH LOVE BY Avinash Sha

'गंगाधर भगवान शिव और गंगा' संख्या ८] और कटु औषधोंमें भीरु लोगोंके लिये उन औषधोंका किन्हीं औषधोंका किन्हीं यन्त्रों तथा पात्रोंमें सुपरिणाम और उन्हींका दूसरे यन्त्रों तथा पात्रोंमें दुष्परिणाम होता निषेध जैसे विषमताका मूल नहीं होता, वैसे ही है, वैसे ही उन विचित्र-शक्तिसम्पन्न वैदिक शब्दों तथा अनिधकारियोंके लिये वेद तथा तदुक्त कर्मींका निषेध कुछ कर्मोंका कहीं सुपरिणाम और कहीं दुष्परिणाम भी अनुचित नहीं है। कहा जा सकता है कि जैसे योग्यता-हो जाता है। उसी स्थितिके आधारपर ही वेदोंके सम्पादनके अनन्तर बालकोंका भी अधिकार है, तो वैसे उच्चारण, श्रवण और अग्निहोत्रादि कर्मोंमें शुद्ध द्विजाति ही स्वधर्मानुष्ठानद्वारा जन्मान्तरमें द्विजत्व-सम्पादनसे अधिकार हो ही जाता है, परंतु जैसे जड, अन्ध, षण्ढ, पुरुषोंको ही अधिकार है। अशौचग्रस्त तथा पतित त्रैवर्णिकों या व्रात्योंका उक्त कार्योंमें अधिकार नहीं है। बिधर, उन्मत्त, मूक आदिकोंमें श्रवणादिका लौकिक अधिकार-विवेचनमें पक्षपातशून्य केवल हितकामनासे सामर्थ्य नहीं है, वैसे ही कुछ असामर्थ्य शास्त्रसे ही गम्य ही नियम है। राजसूय यज्ञमें केवल क्षत्रियका अधिकार है। जैसे लौकिक सामर्थ्य सबको नहीं है, वैसे ही है, ब्राह्मण-वैश्यका नहीं। वैसे ही वैश्य-स्तोममें केवल अलौकिक सामर्थ्य भी सबको नहीं है। पुराणोंद्वारा वैश्यका ही अधिकार है। इसी तरह किसीमें रथकारका वेदार्थ-ज्ञान, शम-दमादि मानव-सामान्य धर्मों तथा ही और किसीमें स्थपतिका ही अधिकार है। ब्राह्मणके सर्वशास्त्रफल भगवद्भक्ति और ज्ञानमें मनुष्यमात्रका लिये मद्यबिन्द्रपानमें ही मरणान्त प्रायश्चित्त है, औरोंके अधिकार है और उसीके द्वारा सबका परमकल्याण भी लिये वैसा नहीं। ब्राह्मणको सर्वत्याग, क्षत्रियको साम्राज्य, होता है। भगवन्नामादि वैदिक धर्मसे मनुष्यकी तो कौन गृहस्थको द्रव्यदानमें पुण्य, सर्वमान्य संन्यासीको द्रव्यदानमें चलाये, गृध्र, बन्दर, भल्लूकतककी परम सद्गति हुई पाप, स्वधर्मबहिर्मुख ब्राह्मणको भी नरक, स्वधर्मनिष्ठ और होती है—'**पाई न केहिं गति पतित पावन राम** अन्त्यजको भी दिव्य लोकप्राप्ति, यह सब केवल भजि सुनु सठ मना। गनिका अजामिल ब्याध गीध वस्तुस्थितिका अनुसरण है। माता शिशुके हाथसे ईख गजादि खल तारे घना॥ आभीर जमन किरात खस छीन लेती है, परंतु मिसरी दे देती है। क्या यहाँ द्वेष है? स्वपचादि अति अघरूप जे। कहि नाम बारक तेपि कहा जा सकता है कि श्रवणादिके अनिधकारियोंको *पावन होहिं राम नमामि ते॥* (रा०च०मा०

श्रवणादिद्वारा वेद अनुपकारक होनेसे वेदोंमें विषमता आ ७।१३०। छंद १) जायगी, परंतु यह ठीक नहीं है; क्योंकि धनुष आदिके अत: स्पष्ट है कि देश-जातिपक्षपातके बिना धारण करनेमें असमर्थोंके लिये धनुष-धारणका निषेध यथाधिकार वेद सर्वकल्याणकारी है।

'गंगाधर भगवान् शिव और गंगा'-

(२) धर्म रूपिणी गंगा मैया, भुक्ति मुक्ति वर देती है। यत्र, तत्र, सर्वत्र, सभी में पावनता भर देती है॥

गंगाधर भगवान् शम्भु ने, श्रुति वेदों का सार लिया। कर गंगा प्राकट्य जगत की, रक्षा कर उद्धार किया॥

(8)

शिव की परामूर्ति है गंगा, जगधात्री जल रूपा है।

(श्रीसतीशचन्द्रजी चौरसिया 'सरस')

ममता मयी मातु है गंगा, परम तीर्थ का रूप लिये। आरोग्य दायिनी कर्म, भक्ति, अरु ज्ञान त्रिवेणी रूपा है॥ अक्षय होते अनुष्ठान सब, जो गंगा में जायँ किये॥

भगवान्से अन्तरंगता (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) खा लिया करेंगे। ऐसा होता है। केवल खानेकी बात

जब हम भगवान्के हो जायँगे, तब स्वाभाविक ही हम भगवान्के अनुकूल कार्य करेंगे। यह बात ध्यानमें

रखनेकी है कि हम किसीके हो भी जायँ और उसके प्रतिकूल कार्य करें—ये दोनों बातें नहीं हो सकती हैं।

यदि हम किसीके हो गये तो उसके अनुकूल बन गये।

हमारा प्रत्येक कार्य उसके अनुकूल होगा। अनुकूल कार्य कौन-सा है? जिसमें उसकी रुचि है। जो वह चाहता

है। इससे हम भगवानुकी रुचि देखते रहेंगे कि वे क्या

चाहते हैं। इसलिये सदाचार अपने आप आ जायगा। इसके बाद रुचि देखते-देखते उनका मन हमारे

सामने प्रकट हो जायगा। वे अपने-आपको खोल देंगे। वे अपने रहस्यको बता देंगे। वे अपनी छिपी चीजको

दिखा देंगे। वे अपना परदा हटा देंगे। उस समय उनका जो असली रूप है, वह हम देखेंगे। इसीलिये यह आदिपुराणका वचन है, जिसमें अर्जुनसे भगवान् श्रीकृष्ण

कहते हैं-मन्माहात्म्यं मत्सपर्यां मच्छुद्धां मन्मनोगतम्।

जानन्ति गोपिकाः पार्थं नान्ये जानन्ति तत्त्वतः॥ गीतामें भी आया है 'यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः' और यहाँ भी आया है 'तत्त्वतः'। भगवान्में क्या विशेषता है, भगवान्की क्या महिमा है, भगवान्की पूजा

कैसे करनी चाहिये? भगवान्में कैसी श्रद्धा होनी चाहिये और भगवान् क्या चाहते हैं ? इन बातोंको हम शास्त्रके द्वारा ऊपर-ऊपरकी बात सब जान लेते हैं। कोई

महापुरुष हो, उसकी पूजाका विधान सब लोग ऊपरसे

जान लेते हैं, परंतु उस महापुरुषको अमुक चीज खानेका खास शौक है। वह बताता नहीं है; क्योंकि यह साधारण

बात तो है नहीं। वहाँ तो जो पब्लिकमें भोग रखा जाता है वह रख दिया गया नियमानुसार, परंतु जो अन्तरंग

होगा, उससे वह कह देगा कि भाई! मुझे इस चीजका शौक है। यह चीज मुझे गुपचुप ला दिया करो और हम

नहीं है। हमारे मनमें कई तरहकी बातें होती हैं। वे सब बातें हम पब्लिकमें नहीं कर सकते। सबके सामने वे ही बातें कहते हैं, जो सबके सामने कहनेके लिये होती हैं,

> परंतु अपने मनकी बात—अन्तरंग बात हम वहाँ कहते हैं, जहाँ हमें संकोच नहीं होता है। इसलिये यह सिद्ध है कि जिसके सामने हमारा संकोच निकल गया, जो अन्तरंग हो गया, उससे कहते हैं।

> भगवान्की क्या महिमा है—'मन्माहात्म्यम्', भगवान्की सेवा कैसे होनी चाहिये—मत्सपर्याम्, भगवान्में श्रद्धा कैसे करनी चाहिये—'मच्छ्रद्धाम्'

> **'मन्मनोगतम्'**—भगवान्के मनमें क्या है? इन सारी चीजोंको शास्त्रसे हम लोग जानते हैं। जो पूजाकी पद्धित है, वह हम जानते हैं। उस पद्धितके अनुसार ही पूजा करते हैं। जैसे कोई राजगद्दीपर आसीन राजा है,

> उसकी किस विधिसे पूजा होनी चाहिये, राजाका कैसे सम्मान होना चाहिये, दरबारमें किस पोशाकमें कैसे बैठना चाहिये-यह सब नियम बने हुए हैं और उन नियमोंके अनुसार बरताव होता है, परंतु उस महाराजाके मनमें कोई और अपनी बात हो-व्यक्तिगत, जो नियमोंमें

> नहीं है, परंतु जो उसके लिये प्रीतिकर है, उस बातको वह उसीसे कहता है, जो अन्तरंग है। उससे चुपकेसे कह देगा। राजदरबारमें दीवानसे नहीं कहेगा, मन्त्रीसे नहीं कहेगा; क्योंकि राजाका अन्तरंग वह दीवान नहीं

िभाग ९०

है, मन्त्री नहीं है। इसीलिये भक्तिमें जो पाँच भाव हैं-शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर। इसमें थोड़ी-सी बात दास्यकी ले लीजिये। एक राजा है और उसकी सब प्रजा

हैं। प्रजाके नाते सब राजाके भक्त हैं। राजा बड़ा सदाचारी है, बड़ा शिष्ट पुरुष है, प्रजापालक है। वह हर प्रकारसे श्रद्धाके योग्य है। प्रजाके नाते सब उसकी संख्या ८] भगवानुसे अन्तरंगता भक्ति करते हैं। सबका एक-सा दर्जा है। अब कल्पना गोपियाँ जानती हैं और कोई नहीं जानता है। कीजिये, उसी प्रजामेंसे किसी एकको राजाने महलमें मन्माहात्म्यं मत्सपर्यां मच्छुद्धां मन्मनोगतम्। नौकर रख लिया। राजाका वह व्यक्तिगत नौकर हो जानन्ति गोपिकाः पार्थं नान्ये जानन्ति तत्त्वतः॥ गया। राजदरबारके नाते जैसे और प्रजा है, वैसा वह है गोपियाँ क्यों जानती हैं? क्योंकि अत्यन्त अन्तरंगतामें आनेपर जब दिलमें यह आ जाता है कि मैं इसका हूँ ही। उसके कारण वह राजाका प्रिय पात्र है ही। उसके नाते राजा उसका पालन करते ही हैं। उसके नाते राजाके यह मेरा है। कहीं धोखेकी सम्भावना नहीं, कहीं किसी लिये नियम उसको मालूम हैं ही, परंतु जब वह अन्तरंग प्रकारके परायेपनकी सम्भावना नहीं, कहीं किसी प्रकारका दास हो गया, तब महलमें गया। राजदरबारमें बैठना और कुछ लेने-देनेका व्यवहार नहीं, बिलकुल अपनापन होता महलमें बैठना अलग-अलग बात है। वहाँ कपड़े भी है। अपनेके सामने ही हृदय खुलता है। इसलिये जब उतारते हैं और कहते हैं जरा, हाथ धुलाओ मगर हम भगवान्के अपने हो जायँगे, तब क्या होगा कि हमारे दरबारमें यह बात नहीं कहते हैं। नौकरसे बार-बार सामने भगवान्का हृदय खुल जायगा। उस समय हम अपने मनकी बात कहते हैं और पाससे आज्ञा देते हैं कि जान सकेंगे। भगवान्की आज्ञाकी आवश्यकता नहीं यह कार्य करो। जो प्रजाजनमें था, वह अब निजी दास होगी। उस समय हम जान सकेंगे कि भगवान् क्या हो गया तो और उनके समीप आ गया न। उसके सामने चाहते हैं ? उस समय हमें पता लगेगा कि इस समय वह बात राजा कह देते हैं, जो उनकी अपनी व्यक्तिगत इनके मनमें क्या है ? रुचि तो जान ली जाती है बार-चाह होती है। जिसे दरबारमें नहीं कह सकते। यह बार देखनेपर और रुचिसे आगेकी जो चीज है—मनोगत स्वाभाविक बात है। इसलिये वह और अन्तरंग हुआ भाव। रुचि एक चीज है, परंतु इस समय हमारे मनमें और उसे मनकी बात मालूम हुई। क्या है, यह दूसरी चीज है। हमारा मन कब किस भगवान्ने कहा—जब मुझमें पराभक्ति होती है तब प्रकारका है, इस बातको वह जानता है, जिसका हमारे उस भक्तिके द्वारा मैं कैसा हूँ, क्या हूँ — यह सब जानते मनमें प्रवेश है। यह कल्पनाकी बात नहीं है। इसे आप हैं। आदिपुराणमें भगवान्ने कहा कि मेरी महिमा क्या घरमें करके देख लीजिये। जिसके साथ आप अन्तरंगता है, मेरी पूजा कैसे होती है, मुझमें श्रद्धा कैसे की जाती करेंगे और वह जान जायगा कि सच्ची अन्तरंगता है तो है और मेरे मनमें क्या है, यह साधारणत: सब जानते उसके हृदयकी बात आपको मालूम होने लगेगी। एक प्रकारका स्वाभाविक मनोवैज्ञानिक प्रभाव होगा कि हैं, परंतु तत्त्वतः नहीं जानते हैं। तत्त्वतः तो वह जानता उसकी बात आपके हृदयमें आने लगेगी। वह क्या है, जिसका मेरे मनमें प्रवेश है। जो मेरे मनको जान गया है। जो मेरे अन्तरंग स्वभावसे परिचित है। जो मेरी सोचता है, उसे आप सोचने लगेंगे। वह क्या देखता है, वास्तविक महिमासे परिचित है, वह तत्त्वत: जानता है। उसे आप देखेंगे। वह क्या चाहता है, उसे आप चाहने तब वहाँपर कहा भगवान्ने—मेरी महिमाको, मेरी पूजाको, लगेंगे। इस तरहसे होनेके बाद भगवान्के मनकी बात मेरी श्रद्धाको और मेरे मनकी बातको तत्त्वत: केवल आपके मनमें आने लगेगी। रटत रटत रसना लटी तृषा सूखि गे अंग। तुलसी चातक प्रेम को नित नूतन रुचि रंग॥ अपने प्यारे मेघका नाम रटते-रटते चातककी जीभ लट गयी और प्यासके मारे सब अंग सूख गये। तुलसीदासजी कहते हैं कि तो भी चातकके प्रेमका रंग तो नित्य नया और सुन्दर ही होता जाता है।[दोहावली]

पवित्र जीवनका साधन (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) विचारोंकी पवित्रता मंगलमय प्रभु। दूसरेका कुछ नहीं, वह केवल मुखसे

मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे,

बाकी न मैं रहूँ न मेरी आरजू रहे।

जब तक कि तनमें जान रगोंमें लहू रहे, तेरा ही जिक्र हो औ तेरी जुस्तजू रहे॥

हमारा कर्तव्य है कि हम प्रत्येक कार्यको प्रभुकी

इच्छा समझकर करें। इस प्रकारकी भावना करते-करते

हम देखेंगे कि हमारा सारा जीवन प्रभूसेवामय हो रहा

है। इस भावनासे हमारे सारे कार्य पवित्र होते जायँगे, जिसकी कि बहुत बड़ी आवश्यकता है। यदि हमारे

भीतर यह भावना न आयी तो हमारी प्रार्थनाका भी कुछ विशेष अर्थ न निकलेगा। जो व्यक्ति केवल प्रशंसा

खरीदनेके लिये ही प्रार्थनामें सिम्मिलित होता है या दान देता है, उसमें हम देखेंगे कि यह भावना उसके भीतरसे तिरोहित हो रही है। उसके सारे कार्य प्राय: दम्भ और

पाखण्डसे आच्छादित हो जायँगे और जहाँ पाखण्ड होगा वहाँसे वास्तविकता कितनी दूर होगी, यह सभी जानते हैं। जहाँ प्रभुकी इच्छाको कारण समझा जायगा

तथा उसीके निमित्त सारे कार्य किये जायँगे, वहाँके आनन्दका तो कहना ही क्या? मालिककी मर्जीको अपनी मर्जी बना लेनेवाले सत्पुरुष धन्य हैं, उनके

सौभाग्यका क्या कहना ? आह, कितना सुन्दर होगा वह दिन, जिस दिन हमारी भावनाएँ ऐसी हो जायँगी। पश् किसी कार्यके परिणामको नहीं जानते, मनुष्य

जो मनुष्य शुभ परिणामवाले कार्य करता है, उसे सत्पुरुष कहा जाता है। विपरीत करनेवालेको असत्-पुरुष। भले और बुरे मनुष्यमें केवल यही अन्तर है। दो व्यक्ति प्रार्थना

जान लेता है। मनुष्य और पशुमें यही तो मुख्य भेद है।

करते हैं। एकको उससे शान्ति प्राप्त होती है, दूसरेको उससे कुछ लाभ नहीं होता! क्यों? कारण केवल यही है कि एक सच्चे दिलसे प्रार्थना करता है दूसरा केवल दिखाऊ। एककी प्रार्थनामें उसकी सारी इच्छाओंका,

प्रार्थनाके शब्दोंका उच्चारणमात्र करता है। उसका मन न जाने कहाँके सैर-सपाटे किया करता है, उसकी भावनाएँ न जाने कहाँ चक्कर काटा करती हैं। उसकी

िभाग ९०

प्रार्थनामें कोई दिलचस्पी नहीं, वह तो सिर्फ बड़ाई पानेके लिये ही सब कुछ करता है। फिर यदि उसे प्रार्थनासे कुछ भी लाभ नहीं होता तो इसमें आश्चर्यकी बात ही क्या है? नाटकके पात्रोंके झूठे आँसुओंसे भी

कहीं वस्तुत: हमारा हृदय द्रवित हुआ करता है? हम जानते हैं कि वे कल्पित हैं, अत: उनका कुछ भी मूल्य नहीं है। वास्तविकताकी तो कुछ और ही बात है।

कबीरदासजी कहते हैं कि-काँकर पाथर जोरिके मसजिद लई चुनाय। ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय॥ सच है प्यारे! वह तो चींटीकी भी पुकार सुनता है। चिल्लानेकी जरूरत ही क्या है? भला ऐसा भी कहीं

हो सकता है कि तुम सच्चे दिलसे उसे पुकारो और वह न सुने ? क्यों न सुनेगा, अवश्य सुनेगा। घबडानेकी बात नहीं। विश्वास और श्रद्धाकी आवश्यकता है। प्रेमका वार कभी खाली नहीं जाता।

असर सोजे मुहब्बतमें न हो यह गैर मुमिकन है। शमाका जिस्म घुल जाता है गर परवाना जलता है।। शमा जलती है पहिले फिर फिदा होता है परवाना, यह दोनों बेधड़क जलते हैं उल्फतका असर देखो॥ पर उस सर्वान्तर्यामीके दरबारमें ढोंगके लिये स्थान

सरिंगिपीयांत्राओं कीं, इस्तर प्रेमेंब्रा अवलाम्ब्रन शिति है ययांही वस्त्राक्षक ने प्री ADE WITH LOVE हो है रिप्या कि सिंग के स्ति है रिप्या कि सिंग के स्ति है रिप्या कि सिंग के सिंग के स्ति है रिप्या कि सिंग के सि

नहीं है। वहाँ तो सच्चे आँसू चाहिये। दिखाऊ नहीं। सच्चे प्रेमियोंके चरणोंकी धूलि लेनेके लिये वह स्वयं लालायित रहता है। तभी तो यह हो नहीं सकता कि तुम उसे सच्चे दिलसे पुकारो और वह तुम्हारी आवाजपर ध्यान न दे। तुम्हारी पुकार पहुँचनेभरकी देर है, वह तो

दस्तबस्ता तुम्हारी खिदमतमें आकर हाजिर हो जायगा। कोई व्यक्ति बीमार पड़ा है, एक व्यक्ति सेवाके

संख्या ८] पवित्र जीव	नका साधन १५
***********************************	**************************************
लाभकी आशासे या दिखाऊ सेवा करता है। सेवा दोनों	व्यर्थ और पापोंसे पूर्ण हुआ करते हैं। विचारोंके अनुकूल
करते हैं, पर दोनोंकी सेवाओंमें कितना अधिक अन्तर	ही कार्य होते हैं और कार्यके अनुसार ही फल मिलता
है ? जमीन और आसमानका। एककी सेवा वास्तविक	है। बुरे कार्यका फल बुरा होगा ही और अच्छेका
सेवा कही जायगी। दूसरेकी वास्तविक नहीं। ऊँची और	अच्छा। इस नियमका व्यतिक्रम हो नहीं सकता। ' <i>बोया</i>
नीची भावनाओंका अन्तर ऐसा ही होता है।	पेड़ बबूलका आम कहाँ ते होय? ' विचारों, कार्यों
× × × ×	और फलोंका बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमें
बड़ें भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सबग्रंथन्हि गावा॥	विचारोंका स्थान सर्वोपरि है। अत: यदि हम चाहें कि
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा॥	हमारे कार्योंका परिणाम शुभ हो तो सबसे पहले हमारा
सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।	कर्तव्य है कि हम अपने विचार अच्छे बनायें। विचारोंको
कालिह कर्मिह ईस्वरिह मिथ्या दोस लगाइ॥	पवित्र बनाना अत्यावश्यक है।
—तुलसी	विचारोंको पवित्र बनानेके उपाय
इस मानवतनको पाकर भी यदि हमने इसे व्यर्थमें	१-बिना विचारे जो करै, सो पाछे पछिताय।
ही खो दिया तो इसे प्राप्त करनेसे लाभ ही क्या रहा?	काम बिगारै आपनो, जगमें होय हँसाय॥
इस शरीरको रत्नचिन्तामणि कहा जाता है; क्योंकि इसी	—गिरिधर कविराय
देहद्वारा हम अपने सर्वोच्च लक्ष्य प्रभुसाक्षात्कारतक	किसी भी कार्यको करनेके पूर्व उसके परिणामको
पहुँच सकते हैं।	भलीभाँति सोच लो। इस बातपर खूब विचार कर लो
नरतन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही॥	कि तुम उस कार्यको क्यों कर रहे हो। उसका शुभ
यदि यह अमूल्य तन और जीवन हमने कौड़ी-	परिणाम प्राप्त करनेके लिये तुमने जो उपाय सोच रखे
मोल लुटा दिया तो फिर हमारे समान अभागा और कौन	हैं, वे कहाँतक ठीक हैं? ठीक भी हैं अथवा नहीं?
होगा ?	उसके परिणाममें वास्तवमें तुम्हारा हित होगा या नहीं।
कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति न चाहेगा कि ऐसे	इन सब बातोंपर खूब गम्भीरतासे विचार करो। बिना
अमूल्य जीवनको सांसारिक प्रपंचों, विषयभोगोंमें बिताकर	विचारे कोई काम मत करो। अन्यथा यह निश्चय समझो
इसे व्यर्थ खो दिया जाय। इसलिये यह परमावश्यक है	कि अन्तमें तुम्हें पछताना पड़ेगा।
कि इसके एक-एक क्षणका हम सदुपयोग करें। पापोंसे	२-किसी भी कार्यके प्रारम्भमें उस मंगलमय
सर्वथा दूर रहें। सन्मार्गपर चलें और सदैव अपना जीवन	प्रभुका स्मरण अवश्य करो। इससे एक तो यह होगा कि
पवित्रतापूर्वक बितायें। इसके लिये पवित्र विचारोंकी	हम कोई भी कार्य उस प्रभुकी आज्ञा बिना न करेंगे, दूसरे
अत्यधिक आवश्यकता है। हमारे विचार जैसे होते हैं—	प्रभु-इच्छाको हम उस विषयमें विशेष महत्त्व प्रदान
हम भी वैसे ही बन जाते हैं। यदि हमारे विचार पवित्र	करेंगे। उसके परिणामको प्रभुकी इच्छापर छोड़ देंगे। इस
होंगे तो फिर हमारे पवित्र होनेमें कोई सन्देह नहीं। जब	प्रकार निष्काम कर्म और कर्मफलत्याग सीखेंगे। तीसरे,
कोई पापवासना हमारे मस्तिष्कमें आयेगी ही नहीं फिर	ऐसा कार्य जिसमें हम प्रभुको सम्मुख रखेंगे, शुभ होगा
उसके चरितार्थ होनेकी बात ही क्या? अतः मनुष्यके	ही—क्योंकि किसी भी अशुभ या अपवित्र कार्यको
वास्तविक कल्याणके लिये पवित्र विचारोंकी उतनी ही	प्रारम्भ करते समय हम उस सर्वशक्तिमान् परमपिता
आवश्यकता है जितनी शरीरके लिये आत्माकी, वृक्षके	परमेश्वरका नाम लेनेमें हिचकते हैं। उसके लिये हमारी
लिये जड़की, संसारके लिये सूर्यकी, नदीके लिये जलकी	अन्तरात्मा हमें रोकती है। इसीलिये अमंगल-कर्मोंमें प्रभु
और मकानके लिये नींवकी होती है। जिस व्यक्तिके	हमारा साथ नहीं देते। जब हम इस प्रकारका कोई कार्य
विचार पवित्र नहीं होते, उसके सारे कार्य अनावश्यक	करने जाते हैं तो हमें बड़ी लज्जा प्रतीत होती है, झिझक

भाग ९० मालूम होती है। यदि उस समय कोई उस पवित्र वह उस वस्तुका संरक्षण करे। समर्पण करनेवाला तो न्यायकारी भगवानुका नाम ले लेता है तो हम काँप उठते अपना काम कर चुका। अब वह उसकी रक्षाका हैं और यदि उस समय कोई यह कह बैठे कि 'तुम ऐसा जिम्मेवार नहीं। तुम भी जब अपने कार्यको उस कार्य कर रहे हो, तुम्हें ईश्वरका डर नहीं है ?' तो हमारे मालिककी खिदमतमें पेश कर दोगे तो फिर तुम अपने रोंगटे सतर हो जाते हैं। इसीलिये हम उस समय उस हकसे बरी हो जाओगे। फिर यह उस मालिकका कर्तव्य प्रभुका नाम लेना नहीं चाहते। जिस कार्यके प्रारम्भमें हमें होगा कि उस कार्यको अन्ततक पहुँचाये। लेकिन वह उसे अन्ततक पहुँचाये अथवा न पहुँचाये, तुम्हें इससे भगवानुका नाम लेनेमें झिझक मालूम पड़े उसे तुरंत छोड़ देना चाहिये, वह कार्य पवित्र नहीं है। शुभ कार्योंमें क्या? तुम तो अपना कर्तव्य कर चुके। तुम तो अपने हमारा हृदय सदैव निर्भय रहता है अत: हम बिना फर्जसे अदा हो चुके। अब यह उसकी मर्जीकी बात कि झिझके उस दयालू परमेश्वरसे उसके लिये प्रार्थना करते चाहे जो कुछ करे। तुम्हें उसके लिये प्रसन्न अथवा हैं। हमें उस कार्यमें उसके आशीर्वादकी पूर्ण आशा रहती दु:खित होनेकी आवश्यकता नहीं, जिसका काम है वही है और उसकी कृपापर पूर्ण और दृढ़ विश्वास रखनेसे जाने, तुम्हें क्या— हम देखते हैं कि हमें निराश नहीं होना पडता। उसपर जाही विधि राखे राम ताही विधि रहिये। दृढ़ विश्वास रखो। बिना विश्वासके कुछ न होगा। ४-कार्य करते-करते बीच-बीचमें समय मिलते ही बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रविंह न रामु। अपनी प्रार्थनाको दुहराते रहो। इसका खुब स्मरण रखो। करते-करते कहीं यह न सोचने लग जाना कि इसका राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु॥ कर्ता में हूँ। तुम अब उसके कर्ता थोड़े ही हो। अब तो —तुलसीदास ३-प्रत्येक कार्यको प्रारम्भ करते समय उस मंगलमय वह दयालू परमेश्वर उसका कर्ता है। तुम तो केवल भगवानुकी सच्चे दिलसे प्रार्थना करो, जिसके फलस्वरूप निमित्तमात्र हो। सच्चे सेवककी भाँति पूरी लगनके साथ दृढ़चित्तसे उसमें लगे रहो। उसीकी मर्जीको अपनी मर्जी वह तुम्हें उसकी पूर्तिके लिये केवल आशीर्वाद देकर ही न रह जाय प्रत्युत तुम्हारे कार्यको पूर्णतया पवित्र भी बना बना लो। उससे दिल खोलकर कह दो कि— दे। यदि उसके पवित्र होनेमें कुछ भी कमी हो तो वह 'राजी हैं हम उसीमें जिसमें तेरी रजा है।' उस कमीको पूर्णतया निकाल दे। तुम्हारे विचारों, तुम्हारी प्यारे! सेवककी अपनी इच्छा ही क्या? उसे तो भावनाओं और तुम्हारे कार्यों—सभीको पवित्रताकी ओर अपनी सारी इच्छाओं, सारी कामनाओंका दमन करना ले जाय। ऐसी प्रार्थनाके साथ-ही-साथ एक कार्य और पड़ेगा। मालिककी खिदमतके लिये अपनी हस्तीको ही भी करो। प्रत्येक कार्य प्रभुको समर्पण कर दो। मिटा देना पडेगा, क्योंकि— त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये। है गुमराह जिस दिलमें बाकी खुदी है, इस बातका सदैव स्मरण रखो कि पवित्र और तुझसे जिसने खुदीको गँवाया॥ सदिच्छाओं के साथ जो कार्य किये जाते हैं - मालिककी खुदी-अहंकार-अभिमान आदिके हृदयमें रहते हुए भेंट करनेके लिये वे ही सर्वोत्तम होते हैं। उस परमब्रह्म भी कहीं सच्चे दिलसे काम हो सकता है? अत: प्यारे कल्याणमार्गके पथिको! इस 'मैं 'पनके अहंकारको हृदयसे परमेश्वरको—जो कि पवित्रसे भी पवित्र है, भला कोई निकाल फेंको। खुदीको जला डालो, सफलताकी यही मिलन वस्तु किस प्रकार भेंट की जा सकती है ? उसके मन्दिरमें तो केवल पवित्र वस्तु ही चढायी जा सकती कुंजी है। है। उसके लिये तो शुद्ध ही भेंट चाहिये। मुनव्वर अंजुमन होता है महिफल गर्म होती है। जब हम किसी वस्तुका किसीको समर्पण कर मगर कब ? जब कि खुद जलता है शमा-ए-अंजुमन पहिले॥ चुकते हैं तो फिर उस व्यक्तिका कर्तव्य हो जाता है कि अत:-

संख्या ८] पवित्र जीव	नका साधन १७
**************************************	**************************************
अगर है शौक मिलनेका तो हरदम लौ लगाता जा।	करो। मान लो तुम किसी सत्य घटना अथवा कथाका
जलाकर खुदनुमाईको भसम तनपर रमाता जा॥	वर्णन कर रहे हो, अकस्मात् उसमें तुम्हारे किसी शत्रुकी
पकड़कर इश्ककी झाड़ सफा कर हिज्र-ए दिलको।	बात आ जाती है—यद्यपि कथा प्रारम्भ करनेके पूर्व
दुईकी धूलको लेकर मुसल्लेपर उड़ाता जा॥	उसका वर्णन लानेकी तुम्हारी लेशमात्र भी इच्छा न थी।
यदि तुम्हें सफलता प्राप्त करनेकी इच्छा है तो	उसके वर्णन करनेसे तुम्हारे शत्रुका अनिष्ट हो सकता
अपने आपको भूल जाओ। अपने कर्तापनके अहंकारको	है, उसकी हानि हो सकती है, उसे दण्ड मिल सकता
मिटा डालो। जिस काममें लगो, उसीमें अपने अस्तित्वको	है (सांसारिक दृष्टिसे यह तुम्हारे हितकी बात है) किंतु
डुबा दो। कर्ता और कार्यमें कुछ भी भेद न रहे। सफलता	तुम कभी भी ऐसा मत करो। यदि कभी ऐसा कोई
पानेकी इच्छातकको काम करते-करते भूल जाओ।	प्रलोभन तुम्हारे मार्गमें आ जाय तो भूल करके भी उसके
देखोगे सफलता तुम्हारे पास आये बिना रह नहीं सकती।	वशीभूत न हो जाओ। प्रलोभन तुम्हारा सर्वनाश ही
प्यारे! खुदीको मिटा दो, खुदा मिल जायगा।	करेंगे। उनके वशमें हो जानेसे तुम्हारा कोई भी
५-कार्यके बीचमें यह मत भूल जाओ कि तुम इस	वास्तविक लाभ न होगा। उनपर विजय प्राप्त करो।
कार्यको प्रभुको समर्पण कर चुके हो। इस प्रकार यदि	७-धर्मके प्रत्येक कार्यमें उसके सारे सहायक
कहीं पथसे विचलित हो गये तो बड़ा बुरा होगा।	साधनोंको भी सम्मिलित कर लो। इससे आवश्यकता
आत्मप्रशंसा, क्षणिक सुख अथवा किसी पापमें जाकर आबद्ध	पड़नेपर मान लो तुम्हें एकाध साधन छोड़ना पड़ा तो
हो जाओगे। 'आये थे हरिभजनको, ओटन लगे	दूसरे सहायक साधन तुम्हें कर्तव्यपथपर दृढ़ बनाये
कपास ' वाला हाल हो जायगा। इस प्रकारसे पथभ्रष्ट	रखेंगे। उससे तुम्हारी कुछ विशेष हानि न होगी। जिस
होनेका परिणाम कितना भयंकर होगा, सोचनेसे आश्चर्यान्वित	प्रकार कोई व्यक्ति शरीरपर विजय प्राप्त करनेके हेतु
होना पड़ेगा। जैसे—तुम किसी स्त्रीको ब्रह्मचर्यपालनका	उपवास करता है, जिस समय वह बीमार पड़ जाता है
उपदेश दे रहे हो और इसके लिये तुम एक अत्यन्त	अथवा कमजोर हो जाता है और उसे दवा खानेका
सुन्दर दृष्टान्त उसे सुना रहे हो, जिसमें अब्रह्मचर्यसे रहने	आदेश मिलता है तो वह शरीरपर दयास्वरूप अथवा
अथवा व्यभिचार करनेके भयानक परिणाम और उसकी	अपने स्वभावके कारण उपवास तोड़नेके लिये प्रलोभित
निस्सारताका बड़ा सुन्दर वर्णन है—पर मान लो तुम्हारे	हो सकता है। उसका सारा नियन्त्रण बेकार हो जाता
श्रोता तुम्हारी कथा कहनेकी सुन्दर शैलीपर मोहित हो	है, परंतु जो व्यक्ति अपने उपवासमें केवल आहारकी
जाते हैं और जिसके फलस्वरूप वह तुम्हें चाहने लगते	राजसिकता और तामसिकतापर ही नियन्त्रण नहीं रखता
हैं और कथाके सार—पापसे घृणा करने, व्यभिचारसे	प्रत्युत उसके साथ ही सांसारिक तमाम भोगोंसे विरक्तिका
बचनेकी ओर उनका मन ही नहीं जाता! जरा सोचो तो	अभ्यास करता है, मनके रहस्योंकी खोज-बीनकर
कि इसका परिणाम कितना भयंकर होगा ? कल्याणमार्गमें	उनपर नियन्त्रण रखता है, नम्रता, दयालुता, दान, प्रभु-
इस प्रकारकी अनेकों बाधाएँ आयेंगी। ध्यान रखना कहीं	प्रार्थना आदि-आदि तमाम साधन साथ-ही-साथ करता
वे तुम्हें पथसे विचलित न कर दें। इस विषयमें खूब	रहता है—उपवास तोड़नेके लिये बाध्य होनेपर भी
सतर्क रहना आवश्यक है। देखना अपना लक्ष्य न भूल	उसकी कुछ विशेष हानि नहीं होती। वह उपवास तोड़
जाना। तुम्हें अपने मंजिले-मकसूदपर पहुँचना है। वहाँ	देनेपर भी अपने स्वादपर विजय प्राप्त करनेका अभ्यास
पहुँच करके ही विश्राम लेना।	करता रहता है, साथ ही अन्य सब साधनोंका भी पूर्ववत्
६–कार्य करते–करते बीचमें यदि कोई आकस्मिक	अभ्यास करता रहता है। अत: लक्ष्यतक पहुँचनेके लिये
घटना हो जाय, जिससे तुम्हें कुछ लाभ प्राप्त होनेकी	जितने अधिक साधन साथ-साथ चला सको, चलाते रहो।
आशा हो तो उससे कुछ भी लाभ उठानेका प्रयत्न न	८-जो वस्तु जितनी अधिक मूल्यवान् होती है,

भाग ९० उसके लिये उतना ही अधिक त्याग करना पडता है, नहीं जाती। प्रभु शरणागतवत्सल हैं, बड़े ही दयालु हैं, कुपालु हैं, न्यायकारी हैं, उनके दरबारमें अन्यायके लिये उतना ही अधिक मूल्य चुकाना पड़ता है। मिट्टीका एक साधारण घड़ा बहुत ही मामूली चीज है। अत: वह हमें स्थान ही नहीं है। शुभ कार्योंके हेतु सच्चे दिलसे की एक-दो पैसेमें मिल जाता है किंतु यदि हम उसी तरह गयी प्रार्थना अवश्य सफल होती है, यह दृढ़ विश्वास एक हीरेका मूल्य आँकने बैठें तो फिर हो चुका! मिट्टीके रखो। यह प्रार्थना और प्रभुपर विश्वास—तुम्हारे विचारोंको घड़ेकी अपेक्षा एक हीरेका मूल्य लाखों गुना अधिक है। शोधकर पूर्णतया पवित्र बना देगा। उसके लिये यदि हजारों रुपये हमें देने पडें तो फिर इसमें १०-जो धन, जो समय हमें ईश्वरसेवार्थ प्राप्त आश्चर्यकी क्या बात है। जो स्थान जितना अधिक दूर हुआ है, उसे उसीमें लगाना हमारा कर्तव्य है। अन्यथा होता है उसमें उतने ही अधिक कण्टकोंके आनेकी करनेसे हम कर्तव्यच्युत होते हैं। कर्तव्यच्युत होना मनुष्यके लिये बड़ी लज्जाकी बात है। हम यदि सम्भावना रहती है। सारे जगत्के स्वामी, राजाओंके भी राजा, सर्वशक्तिमान् परमब्रह्म परमेश्वरका भला कौन ध्यानपूर्वक विचार करें कि हम इस प्रकारके कार्य कब मूल्य आँक सकता है ? ऐसी अमूल्य वस्तुके लिये हमें करते हैं तो स्पष्ट पता चल जायगा कि जब हम किसी यदि अत्यधिक त्याग करना पडे, अनेकों कष्ट उठाने वासना—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदिके पडें, बहुत-से दु:ख सहन करने पडें तो इसमें आश्चर्य वशीभृत हो जाते हैं और अपने मनको काबूमें नहीं रख ही क्या? प्रभु-जैसी अमूल्य वस्तुके मार्गमें सांसारिक पाते हैं तभी हम इस प्रकारके कार्य करते हैं। प्यारे! प्रलोभन, दु:ख, कष्ट आदि बहुत-सी बाधाएँ आती हैं। हमारे भीतर जबतक इस प्रकारकी गन्दगियाँ भरी रहेंगी यदि हमें उसतक पहुँचना है तो हमें हँसते-हँसते इन तबतक न तो हम पवित्र हो सकेंगे, न हमारे कार्य पवित्र सबका सामना करना पड़ेगा। कोई भी प्रलोभन, कोई भी हो सकेंगे और न हमारे विचार पवित्र हो सकेंगे! किसी बाधा, कोई भी संकट जब हमें विचलित न कर सकेगा भी कल्याणकामीका बिना इन्हें जीते काम नहीं चल तभी हम अपने लक्ष्यतक पहुँच सकेंगे। कितना सत्य सकता। इनपर विजय प्राप्त कर लेना यद्यपि सहज नहीं निहित है श्रीभूपेन्द्रनाथ सान्यालके इन शब्दोंमें— है तो भी अभ्यास करते-करते क्या नहीं हो जाता? मिलनेको प्रियतमसे जिसके प्राण कर रहे हाहाकार। करत करत अभ्यासके जडमित होत सुजान। गिनता नहीं मार्गकी कुछ भी दूरीको वह किसी प्रकार।। रसरी आवत जात ते सिलपर होत निसान॥ गीतामें भी श्रीभगवान् कहते हैं-नहीं ताकता किंचित भी शत शत बाधा-विघ्नोंकी ओर। असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्। छूटता जहाँ बजाते मधुर बंसरी नन्दिकशोर॥ अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते॥ मिली हुई जो कभी भाग्यवश उसको हैं आँखें होतीं। जानता कीमत जो उस रूपमाधुरीकी होती॥ सांसारिक सारे प्रलोभनों, सारी कामनाओं, वासनाओं, कुछ भी कीमत हो, परंतु है रूपरसिक जो जन होता। भोगों आदिसे सर्वरूपेण विरक्ति और भगवत्-प्रेममें सदैव दौड़ पहुँचता लेनेको तत्काल, नहीं पलभर खोता॥ प्यारे! तुझे उस अलबेले यारके दरवाजेतक पहुँचना निमग्न रहनेका सदैव अभ्यास करते रहो, बस, देखोगे है। अपनी राहपर तेजीसे चलता चला जा। विघ्न-कि हमारे विचार स्वयमेव पवित्र होते जा रहे हैं, कामनाओंका अन्त होता जा रहा है, मन काबूमें आता बाधाओंकी परवा ही न कर। ९-कार्य चाहे छोटा हो चाहे बड़ा उसके निमित्त जा रहा है, उस सच्चिदानन्दके श्रीचरणोंमें दिन-प्रति-सच्चे हृदयसे पूर्ण विश्वासके साथ प्रार्थना करनी दिन नित नूतन प्रेम बढ़ता जा रहा है। विचारोंको पवित्र चाम्तिनेduरेडकोरोDाइस्टेंoरसम्डहार्रसलेरारीव्यार्थसहत्तुसुरविhaस्स्रवेका स्टिष्टिचिस्रारमाधन्त्रहै E BY Avinash/Sha

सौधकोंके प्रति-संख्या ८] साधकोंके प्रति— [भगवानुका भजन करनेमें ही कल्याण है] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) [गताङ्क ७ पृ०-सं० १७ से आगे] तो पहचान लें, पर वहाँ तो हिंडुयाँ दीख रही थीं। भाइयो-बहनो! मनुष्य-शरीर मिला है तो बड़ा नामदेवजी महाराजसे पूछा गया कि चोखामेला मर गया सुन्दर मौका मिला है। भगवान्का भजन करो और दुनियाकी सेवा करो। अपने पासमें धन हो तो धनसे सेवा है, उसके शवकी पहचान कैसे हो ? तो उन्होंने कहा कि करो, सामर्थ्य हो तो शरीरसे सेवा करो, नहीं तो मनसे उसकी पहचान सीधी है। हड्डियोंको कानमें लगाओ, जिस ही सबका भला चाहो। सब सुखी हो जायँ, सब नीरोग हड्डीसे विट्ठल-विट्ठल आवाज आयेगी, वह चोखामेलाकी है। आज ख्याल करो, कितनी विचित्र बात है। उनकी हो जायँ, सबका कल्याण हो जाय-ऐसा भाव रखो तो मुफ्तमें ही आपका पुण्य हो जायगा। जितना कर सको, हड्डियोंमें नामजपका असर हो गया, विलक्षणता आ गयी। उतना करके पुण्य कर लो, जितना दे सको, उतना देकर जिस स्थानपर संत-महात्माओंकी दाह-क्रिया की पुण्य कर लो और यह न कर सको तो भाव शुद्ध बना जाय, वहाँ जाकर बैठो तो भगवान्में मन लग जायगा लो। भाव शुद्ध बनानेसे आपका अन्त:करण निर्मल हो और श्मशानमें जाकर बैठो तो हृदयमें हलचल मच जायगी, शान्ति नहीं मिलेगी, मरनेके बाद भी दोनोंमें

जायगा, भगवानुकी बड़ी कृपा हो जायगी, जीवन शुद्ध हो जायगा। जितने भी अच्छे-अच्छे महात्मा हुए हैं, उनके भाव शुद्ध थे। उनके भाव दूसरोंका उपकार करनेके थे। हमारी बहनें भी यदि चाहें तो भाव शुद्ध बनाकर मीराबाई बन सकती हैं, फूलीबाई बन सकती हैं, करमाबाई बन सकती हैं, करमैतीबाई बन सकती हैं। उनकी इतनी महिमा क्यों है ? कि वे भगवान्में लग गयीं, भजनमें लग गयीं। फूलीबाई जाटनी थी, पढ़ी-लिखी कुछ नहीं थी।

उसकी कोई चीज नहीं लेते कि यह मुर्देके चीज है, परंतु गोबर थाप रही थी। उसमें दूसरी कहती है कि यह थेपड़ी मेरी है और यह कहती है तेरी नहीं, मेरी है। इसकी पहचान क्या है? इसे उठाकर कानमें लगाओ, यदि भगवान्का नाम सुनायी देता है, तब तो मेरी, नहीं तो तेरी। पंढरपुरमें एक भक्त हुए। उनका नाम था चोखामेला। भगवानुका भजन करते थे, विट्ठल-विट्ठल जपते थे। मंगलबेड़ा गाँवमें एक मकान बन रहा था। उसमें ये काम समय विदुरजी तीर्थयात्राके लिये चले गये थे। जब वे कर रहे थे। अचानक मकानके गिर जानेसे ये दबकर तीर्थयात्रा करके लौटे, तब युधिष्ठिरजी महाराजने कहा— मर गये। मकानका मलबा हटानेमें कई दिन लग गये।

कोई संत चला जाय तो उसकी चीज माँगकर लेते हैं कि उसको हम पूजामें रखेंगे। उनकी चीज पवित्र होती है। क्यों पवित्र होती है? कि उनमें ममता नहीं होती। जिस चीजमें मनुष्यकी ममता होती है, वह चीज अपवित्र हो जाती है। संत-महात्माओंमें ममता नहीं होती, इसलिये उनकी चीज पवित्र होती है, उनका चरित्र पवित्र होता है, उनके दर्शन पवित्र होते हैं, उनकी यादगिरी पवित्र होती है। भागवतमें आया है कि संतोंको याद करनेसे घर तत्काल पवित्र हो जाते हैं—'येषां संस्मरणात् पुंसां सद्यः शुद्ध्यन्ति वै गृहाः' (१।१९।३३)। क्यों पवित्र हो जाते हैं? कि वे भगवान्का भजन करते हैं। युद्धके

फर्क रहता है। कोई साधारण आदमी मर जाय तो

भवद्विधा भागवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो। जब उसमेंसे शव निकाले गये तो यह पहचानमें नहीं आया तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता॥ कि चोखामेलाका शरीर कौन-सा है। चेहरा दीखे, तब (श्रीमद्भा० १।१३।१०)

भाग ९० 'आप-जैसे भगवान्के प्रिय भक्त स्वयं तीर्थस्वरूप तुलसी रघुबर नाममें, सब काहू को सीर॥ होते हैं। आपलोग अपने हृदयमें विराजित भगवान्के भगवान्का नाम लेनेमें कौन मना कर सकता है? प्रभावसे तीर्थोंको भी महातीर्थ (महान् पवित्र) बनाते हुए भाई हो, बहन हो, किसी जातिका, किसी वर्णका, किसी विचरण करते हैं।' आश्रमका कोई क्यों न हो, भगवान्के भजनकी किसीको पापी लोग तीर्थोंमें अपने पाप छोड़ आते हैं। जब मनाही नहीं है। वेदादि पढ़नेमें, गायत्रीका जप करनेमें भक्तलोग वहाँ जाते हैं, स्नान करते हैं, तब उन तीर्थींके सबका अधिकार नहीं है, पर भगवान्के चरणोंकी शरण पाप नष्ट हो जाते हैं और वे पवित्र हो जाते हैं। एक लेनेके सब अधिकारी हैं। हिन्दू हो, मुसलमान हो, ईसाई साधु थे। वे सभी साधुओंकी निन्दा किया करते थे कि हो, बौद्ध हो, जैन हो, यहूदी हो, पारसी हो, कोई क्यों इनका साधु बनना अवैध है, इनको साधु बननेकी न हो, वह भगवान्के चरणोंकी शरणमें जा सकता है। शास्त्रकी आज्ञा नहीं है, आदि। अच्छे संत-महात्माओंकी, 'माँ' कहनेका सबको अधिकार है। सपूत-से-सपूत भी तत्त्वज्ञ, जीवन्मुक्त महापुरुषोंकी निन्दा करनेसे उनको 'माँ' कह सकता है और कपूत-से-कपूत भी 'माँ' कह कोढ़ निकल आया। वे घबराये कि अब क्या करें ? तब सकता है। कपूत हुआ तो क्या, पूत तो है ही। ऐसे ही किसीने उनसे कहा कि तुमने अपनेको ऊँचे दर्जेका साधु रामजीका नाम लेनेके सब अधिकारी हैं। भगवान्को माँ कहनेके सब अधिकारी हैं—'त्वमेव माता च पिता समझकर सन्तोंकी निन्दा की है, तिरस्कार किया है, उसीका यह नतीजा है कि तुम्हें कोढ़ निकल आया। त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।' अब किसी अच्छे सन्तके पास जाओ और उनकी सेवा अपने पासमें अरबों-खरबों रुपये पडे हों और करो। पीलीभीत शहरके पासमें एक सन्त रहते थे। इतना बड़ा राज्य हो, जिसमें सूर्यका अस्त भी न हो, पर लोगोंने कहा कि तुम उन सन्तके पास जाओ, वे बड़े मरनेके बाद वह क्या काम आयेगा? दयालु हैं और तत्त्वज्ञ, जीवन्मुक्त महापुरुष हैं। वे साधु अरब खरब लौं द्रव्य है उदय अस्त लौं राज। वहाँ पहुँचे। रात हो गयी थी, महाराजकी कृटिया बन्द तुलसी जो निज मरन है तो आवे किहि काज॥ थी, अतः वे बाहर ही ठहर गये। रात्रिमें दो स्त्रियाँ वहाँ परंतु भगवान्का भजन किया जाय तो वह साथमें आयीं। महाराज जहाँ स्नान करते थे, वहाँ थोड़ा-सा जायगा। भजन करनेवालेको देखनेसे, उसका संग करनेसे, उसकी बातें सुननेसे शान्ति मिलती है। जल इकट्ठा था। उन दोनों स्त्रियोंने वह जल अपने शरीरपर लगाया तो उनका कालापन मिट गया और वे भजन करे पातालमें, प्रगट होय आकाश। रूपवती हो गयीं। साधुने उनसे पूछा कि तुम कौन हो? दाबी दूर्वा ना रहे, कस्तूरी की बास॥ यहाँ कैसे आयी हो ? तो उन्होंने कहा कि हम गंगा और जिन लोगोंने भजन किया है, उनमें कितनी यमुना हैं। पापियोंके पापसे हम अपवित्र हो गयी थीं। विलक्षणता आयी है। 'रामचन्द्रिका' की रचना करनेवाले अब सन्तोंके चरणोंके जलसे हमारे पाप दूर हो गये, हम केशव कविसे किसीने पूछा कि किसकी कविता बढ़िया पवित्र हो गयीं। ऐसा सुनकर उस साधुने भी उस जलको है ? तो बोले कि मेरी कविता बढ़िया है। उनसे फिर पूछा अपने शरीरपर लगाया तो उनका कोढ़ दूर हो गया। कि क्या गोस्वामीजी महाराजकी कविता बढ़िया नहीं उन्होंने 'उदासीन साधो नमस्ते नमस्ते'-ऐसा स्तोत्र है ? वे बोले कि गोस्वामीजीकी कविता कविता नहीं है, संस्कृतमें बनाया। भगवान्को याद करनेसे मनुष्य पवित्र वे तो वेदोंकी ऋचाएँ हैं, मन्त्र हैं। मैं तो कविकी बात हो जाता है और इसमें सब स्वतन्त्र हैं। कहता हूँ कि कवियोंमें मेरी कविता बढ़िया है। गोस्वामीजी महाराज कवि नहीं हैं, वे तो संत हैं। जाट भजो गूजर भजो, भावे भजो अहीर।

भगवान् विष्णु किससे प्रसन्न रहते हैं संख्या ८] कवियोंकी कवितामें सुन्दरता तो होती है, पर जीवोंका फूलीबाई एक साधारण ग्रामीण जाटनी स्त्री थी। उद्धार करनेकी ताकत नहीं होती। सन्तोंकी वाणीमें उसको जोधपुरके राजा अपने दरबारमें ले गये और कहा

उद्धार करनेकी ताकत होती है। सन्तोंकी वाणी विचित्र

होती है, उनके दर्शन विचित्र होते हैं, उनका संग विचित्र होता है। क्यों विचित्र होता है? कि वे भगवान्में लगे हैं। माइकसे बोलनेमें कितना शब्द पैदा होता है; क्योंकि

उसका सम्बन्ध बिजलीके साथ है। अगर तार काट दिया

जाय तो क्या उसमें वह ताकत रहेगी? ऐसे ही भगवानुका सम्बन्ध होनेसे संत-महात्माओंमें बडी विचित्रता

आ जाती है। वह विचित्रता अपने घरकी नहीं, भगवान्की है। भगवान्का सम्बन्ध टूट जाय तो जै

रामजीकी। अर्जुनने महाभारत-युद्धमें विजय प्राप्त की थी, पर भगवानुके अपने धाममें पधारनेके बाद जब वे

गोपिकाओंको लेकर जा रहे थे, तब लुटेरोंने गोपिकाओंको

लुट लिया और अर्जुन कुछ नहीं कर सके। उनमें शक्ति

भगवानुकी ही थी। भगवानुकी शक्तिके बिना वे क्या कर सकते थे? अगर आप भगवान्के भजनमें लग जाओ तो

दूसरोंका कल्याण कर दो—इतनी शक्ति आपमें आ जाय।

आकर अपनी भाषामें बोली—'गहनो-गाँठो तनकी शोभा, काया काचो भाण्डो। फूली थाने यूँ कहे, थे राम भजो री राण्डो॥'अरी राण्डो! इस प्रकार बैठी

कैसे हो, राम-राम करो। गहने तो शरीरकी शोभा हैं, आज मर जाओ तो वे क्या काम आयेंगे? शरीर तो

कि रानियोंको उपदेश करो। रानियाँ बढिया-बढिया शृंगार करके आसनोंपर बैठी थीं। फूलीबाई उनके पास

कच्चा घड़ा है, न जाने कब फूट जाय। इस तरह अपनी भाषामें सीधी-सादी बात कह दी। उसकी बातसे रानियाँ

नाराज नहीं हुईं। सब लोग फूलीबाईका आदर करते थे; क्योंकि उसके मनमें किसीसे कुछ लेनेकी इच्छा थी ही नहीं। ऐसे कई भक्त हमारे देशमें हुए हैं, साधारण जातिमें हुए हैं, ऊँची जातिमें हुए हैं, पढ़े-लिखे

व्यक्तियोंमें हुए हैं, अपढ़ व्यक्तियोंमें हुए हैं। जो भी भगवान्की तरफ लगा, वह विलक्षण हो गया। मनुष्यपना इसीमें है कि भगवान्की तरफ जाय।[समाप्त]

भगवान् विष्णु किससे प्रसन्न रहते हैं च भाषते । अन्योद्वेगकरं वापि तोष्यते तेन केशवः॥

पैशुन्यमनृतं रतिम् । न करोति पुमान्भूप तोष्यते तेन केशवः॥ परदारपरद्रव्यपरहिंसास् यो न ताडयित नो हन्ति प्राणिनोऽन्यांश्च देहिनः। यो मनुष्यो मनुष्येन्द्र तोष्यते तेन केशवः॥ सदोद्यतः । तोष्यते तेन गोविन्दः पुरुषेण नरेश्वर।। श्श्रुषास् यथात्मिन च पुत्रे च सर्वभूतेषु यस्तथा। हितकामो हिस्तेन सर्वदा तोष्यते सुखम्॥

यस्य रागादिदोषेण न दुष्टं नृप मानसम् । विशुद्धचेतसा विष्णुस्तोष्यते तेन सर्वदा॥ [महात्मा और्व राजा सगरसे कहते हैं — हे राजेन्द्र!] जो पुरुष दूसरोंकी निन्दा, चुगली अथवा

मिथ्याभाषण नहीं करता तथा ऐसा वचन भी नहीं बोलता जिससे दूसरोंको खेद हो, उससे निश्चय ही भगवान्

केशव प्रसन्न रहते हैं। हे राजन्! जो पुरुष दूसरोंकी स्त्री, धन और हिंसामें रुचि नहीं करता, उससे सर्वदा ही भगवान् केशव सन्तुष्ट रहते हैं। हे नरेन्द्र! जो मनुष्य! किसी प्राणी अथवा [वृक्षादि] अन्य देहधारियोंको पीड़ित

अथवा नष्ट नहीं करता, उससे श्रीकेशव सन्तुष्ट रहते हैं। जो पुरुष देवता, ब्राह्मण और गुरुजनोंकी सेवामें सदा तत्पर रहता है, हे नरेश्वर! उससे गोविन्द सदा प्रसन्न रहते हैं। जो व्यक्ति स्वयं अपने और अपने पुत्रोंके समान

ही समस्त प्राणियोंका भी हित-चिन्तक होता है, वह सुगमतासे ही श्रीहरिको प्रसन्न कर लेता है। हे नृप! जिसका चित्त रागादि दोषोंसे दूषित नहीं है, उस विशुद्ध-चित्त पुरुषसे भगवान् विष्णु सदा सन्तुष्ट रहते हैं।[श्रीविष्णुपुराण] भगवान् दक्षिणामूर्तिको भद्रा मुद्रा

(श्रीजशवन्तराय जयशंकर हाथी)

श्रीआदिशंकराचार्य अपने 'दक्षिणामूर्तिस्तोत्रमें' गा रहे हैं-

बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा सर्वास्ववस्थाष्वपि

व्यावृत्तास्वनुवर्तमानमहमित्यन्तः स्फुरन्तं

स्वात्मानं प्रकटीकरोति भजतां यो मुद्रया भद्रया श्रीगुरुमूर्तये श्रीदक्षिणामूर्तये॥ तस्मै



स्वरूप धारण किया, इस सम्बन्धमें कथा है-भारतकी संस्कृतिका स्रोत बहानेवाले केन्द्रोंमें सर्वप्रधान श्रीनैमिषारण्यमें वर्षोंतक चलनेवाले सत्रयज्ञ हुआ करते

श्रीभोलानाथ, आशुतोष भगवान् शंकरने दक्षिणामूर्ति-

थे। 'स्वाहा, स्वाहा'की ध्वनिके साथ-साथ इतिहास-

पुराणकी पावन कथाओंके प्रसंग भी वहाँ चला करते थे। बालवयस्क सूत पुराणी कथा कहनेवाले और आबालवृद्ध

ऋषि-मुनि सामान्यजन कथा सुननेवाले। उपदेशक महोदय बीच-बीचमें 'अयि बाला: समाहिता भवन्तु' की टेक लगाते रहते थे। कुछ वृद्ध मुनिगण एक बार इस टेकके

पुनरावर्तनसे रुष्ट हो गये और वे विष्णुभगवान्के पास

शिकायत करने गये। 'वृद्धोंको बालक कहना क्या उचित है ?' यह प्रश्न भगवान्से पूछा। श्रीभगवान्ने कहा—

'इसका उत्तर ब्रह्माजी देंगे।' सब वहाँ गये। श्रीब्रह्माजीने कहा—'अपने डमरूनादद्वारा जिन्होंने विद्याओंका प्रचार सर्वप्रथम किया, वे शिवशंकर ही इसका निराकरण कर

सदाशिव योगी ठहरे। उन्होंने अपने रुद्ररूपको

त्यागकर 'दक्षिणामूर्ति'का सौम्य जगद्गुरुरूप धारण कर

समाधिस्थ बैठ गये।

हस्तकी तीन अँगुलियाँ अलग और जुड़ी हुईं एवं दूसरी ओर प्रथमा अँगुलीका अग्रभाग अंगुष्ठके अग्रसे मिला

हुआ है। इस भद्रा मुद्रासे कोई सांकेतिक उपदेश तो नहीं इन सारी त्रिपुटियोंको पार करके, 'अ उ म' की तीक्ष्ण

वह 'बाल ही है।' हम यदि कथारसमें तल्लीन होते तो

भी, हम उसे सुनते ही नहीं। और न हमें रोष आता। वाह री संकेत करनेवाली मुद्रा भद्रा-कल्याणकारिणी

नीचेके श्लोकोंमें इसी चित्रकी झाँकी भलीभाँति झलक रही है— वटविटपसमीपे भूमिभागे निषण्णं

त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवं जननमरणदु:खच्छेददक्षं चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धाः शिष्या गुरुर्युवा।

गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः॥ नमः प्रणवार्थाय शुद्धज्ञानैकमूर्तये। निर्मलाय प्रशान्ताय दक्षिणामूर्तये नमः॥

निधये सर्वविद्यानां भिषजे भवरोगिणाम्। सप्ताक्रोतिक्षें।isेानुम्<mark>यिक्ष्रकेला\$क्क्र</mark>ोश्रेटायेhttps://dsc.gg/dharma गुरवेMA**ग्रर्कत्वेश्रिसीमां**H L**द्धिर्यामूर्तये**Avirrash/Sha

लिया और एक विशाल वटवृक्ष-तले वे दक्षिण हस्तमें भद्रामुद्रा और वाम हस्तमें त्रिशूल लेकर मौनव्रतधारी हो

मुनिगण वृक्षकी सघन छायामें बैठ गये और शिवजीके समाधिसे जाग्रत् होनेकी राह देखते रहे। बैठे-

बैठे वे आपसमें इस दृश्यपर विचार भी करने लगे— सौम्य स्वरूप, समाधिस्थ, मौन! फिर भी दक्षिण

दिया जा रहा है। विचारधारा और आगे बह चली। तीन ताप, तीन गुण, तीन अवस्था, तीन आयु—

त्रिशूल-धारसे छेदन करता हुआ, जो जीवात्मा एकाग्रचित्त होकर परमात्मा—अंगुष्ठमात्रपुरुष: - की ओर झुक नहीं जाता, वह उपदेश सुनते हुए भी अबोध ही है। इसलिये

'अयि बालाः' का नाद हमारे कानोंका स्पर्श करनेपर

मुद्रा। गुरु मौन, फिर भी शिष्योंका संशय छिन्न हो गया।

सकलमुनिजनानां ज्ञानदातारमारात्।

नमामि॥

आज भी खरे हैं तालाब संख्या ८] आज भी खरे हैं तालाब पर्यावरण-चिन्तन— [पालके किनारे रखा इतिहास] (श्रीअनुपमजी मिश्र) हुई है। यहींके पाटन नामक क्षेत्रमें चार बहुत बड़े 'अच्छे-अच्छे काम करते जाना,' राजाने कूड़न तालाब आज भी मिलते हैं और इस कहानीको इतिहासकी किसानसे कहा था। कूड़न, बुढ़ान, सरमन और कौंराई थे चार भाई। कसौटीपर कसनेवालोंको लजाते हैं—चारों तालाब इन्हीं चारों सुबह जल्दी उठकर अपने खेतपर काम करने चारों भाइयोंके नामपर हैं। बुढ़ागरमें बुढ़ा सागर है, जाते। दोपहरको कूड़नकी बेटी आती, पोटलीमें खाना लेकर। मझगवाँमें सरमन सागर है, कुँआग्राममें कौंराई सागर है एक दिन घरसे खेत जाते समय बेटीको एक तथा कुण्डम गाँवमें कुण्डम सागर। नुकीले पत्थरसे ठोकर लग गयी। उसे बहुत गुस्सा सन् १९०७ ई० में गजेटियरके माध्यमसे इस आया। उसने अपनी दरांतीसे उस पत्थरको उखाड्नेकी देशका 'व्यवस्थित' इतिहास लिखने घूम रहे अंग्रेजने भी कोशिश की। पर लो, उसकी दरांती तो पत्थरपर पडते इस इलाकेमें कई लोगोंसे यह किस्सा सुना था और फिर ही लोहेसे सोनेमें बदल गयी और फिर बदलती जाती देखा-परखा था इन चार बडे तालाबोंको। तब भी सरमन हैं इस लम्बे किस्सेकी घटनाएँ बड़ी तेजीसे। सागर इतना बडा था कि उसके किनारेपर तीन बडे-बडे गाँव बसे थे और तीनों गाँव इस तालाबको अपने-अपने पत्थर उठाकर लड़की भागी-भागी खेतपर आती है। अपने पिता और चाचाओंको सब कुछ एक साँसमें नामोंसे बाँट लेते थे। पर वह विशाल ताल तीनों गाँवोंको बता देती है। चारों भाइयोंकी साँस भी अटक जाती है। जोड़ता था और सरमन सागरकी तरह स्मरण किया जल्दी-जल्दी सब घर लौटते हैं। उन्हें मालूम पड़ चुका जाता था। इतिहासने सरमन, बुढ़ान, कौंराई और है कि उनके हाथमें कोई साधारण पत्थर नहीं है, पारस कूड़नको याद नहीं रखा; लेकिन इन लोगोंने तालाब है। वे लोहेकी जिस चीजको उससे छुआते हैं, वह सोना बनाये और इतिहासको उनके किनारेपर रख दिया था। बनकर उनकी आँखोंमें चमक भर देती है। देशके मध्य भागमें, ठीक हृदयमें धडकनेवाला यह पर आँखोंकी यह चमक ज्यादा देरतक नहीं टिक किस्सा उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम—चारों तरफ किसी-पाती। कूड़नको लगता है कि देर-सबेर राजातक यह न-किसी रूपमें फैला हुआ मिल सकता है और इसीके बात पहुँच ही जायगी और तब पारस छिन जायगा। तो साथ मिलते हैं सैकड़ों, हजारों तालाब। इनकी कोई ठीक क्या यह ज्यादा अच्छा नहीं होगा कि वे खुद जाकर गिनती नहीं है। इन अनिगनत तालाबोंको गिननेवाले नहीं, इन्हें तो बनानेवाले लोग आते रहे और तालाब राजाको सब कुछ बता दें। किस्सा आगे बढ़ता है। फिर जो कुछ घटता है, बनते रहे। वह लोहेको नहीं बल्कि समाजको पारससे छुआनेका किसी तालाबको राजाने बनाया तो किसीको किस्सा बन जाता है। रानीने, किसीको किसी साधारण गृहस्थने, विधवाने राजा न पारस लेता है, न सोना। सब कुछ बनाया तो किसीको किसी असाधारण साधु-सन्तने— कुड़नको वापस देते हुए कहता है—'जाओ, इससे जिस किसीने भी तालाब बनाया, वह महाराज या अच्छे-अच्छे काम करते जाना, तालाब बनाते जाना।' महात्मा ही कहलाया। एक कृतज्ञ समाज तालाब यह कहानी सच्ची है, ऐतिहासिक है-नहीं बनानेवालोंको अमर बनाता था और लोग भी तालाब मालूम। पर देशके मध्य भागमें एक बहुत बड़े हिस्सेमें बनाकर समाजके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते थे। यह इतिहासको अँगूठा दिखाती हुई लोगोंके मनमें रमी समाज और उसके सदस्योंके बीच इस विषयमें

िभाग ९० एक ठीक तालमेलका दौर कोई छोटा दौर नहीं था। भर लेता था। और जहाँ प्रसाद कम मिलता है ? वहाँ तो उसका एकदम महाभारत और रामायणकालके तालाबोंको अभी एक कण, एक बूँद भी भला कैसे बगरने दी जा सकती छोड दें तो भी कहा जा सकता है कि कोई पाँचवीं सदीसे पन्द्रहवीं सदीतक देशके इस कोनेसे-उस-कोनेतक थी। देशमें सबसे कम वर्षाके क्षेत्र जैसे राजस्थान और तालाब बनते ही चले आये थे। कोई एक हजार वर्षतक उसमें भी सबसे सूखे माने जानेवाले थारके रेगिस्तानमें अबाध गतिसे चलती रही इस परम्परामें पन्द्रहवीं सदीके बसे हजारों गाँवके नाम ही तालाबके आधारपर मिलते बाद कुछ बाधाएँ आने लगी थीं, पर उस दौरमें भी यह हैं। गाँवोंके नामके साथ ही जुडा है 'सर'। सर यानी तालाब। सर नहीं तो गाँव कहाँ ? यहाँ तो आप तालाब धारा पूरी तरहसे रुक नहीं पायी, सूख नहीं पायी। समाजने जिस कामको इतने लम्बे समयतक बहुत गिननेके बदले गाँव ही गिनते जायँ और फिर इस जोडमें व्यवस्थित रूपमें किया था, उस कामको उथल-२ या ३ का गुणा कर दें। पुथलका वह दौर भी पूरी तरहसे मिटा नहीं सका। जहाँ आबादीमें गुणा हुआ और शहर बना, वहाँ अठारहवीं और उन्नीसवीं सदीके अन्ततक भी जगह-भी पानी न तो उधार लिया गया, न आजके शहरोंकी जगहपर तालाब बन रहे थे। तरह कहीं औरसे चुराकर लाया गया। शहरोंने भी लेकिन फिर बनानेवाले लोग धीरे-धीरे कम होते गाँवोंकी तरह ही अपना इन्तजाम खुद किया। अन्य गये। गिननेवाले कुछ जरूर आ गये पर जितना बडा शहरोंकी बात बादमें, एक समयकी दिल्लीमें कोई ३५० काम था, उस हिसाबसे गिननेवाले बहुत ही कम थे और छोटे-बड़े तालाबोंका जिक्र मिलता है। कमजोर भी। इसलिये ठीक गिनती भी कभी हो नहीं गाँवसे शहर, शहरसे राज्यपर आयें। फिर रीवा पायी। धीरे-धीरे टुकड़ोंमें तालाब गिने गये, पर सब रियासत लौटें। आजके मापदण्डसे यह पिछडा हिस्सा टुकड़ोंका कुल मेल कभी बिठाया नहीं गया, लेकिन इन कहलाता है, लेकिन पानीके इन्तजामके हिसाबसे देखें टुकड़ोंकी झिलमिलाहट पूरे समग्र चित्रकी चमक दिखा तो पिछली सदीमें वहाँ सब मिलाकर कोई ५००० सकती है। तालाब थे। लबालब भरे तालाबोंको सुखे आँकडोंमें समेटनेकी नीचे दक्षिणके राज्योंको देखें तो आजादी मिलनेसे कोशिश किस छोरसे शुरू करें? फिरसे देशके बीचके कोई सौ बरस पहलेतक मद्रास प्रेसिडेंसीमें ५३,००० भागमें वापस लौटें। तालाब गिने गये थे। वहाँ सन् १८८५ ई० में सिर्फ १४ आजके रीवा जिलेका जोड़ौरी गाँव है, कोई जिलोंमें कोई ४३,००० तालाबोंपर काम चल रहा था। २५०० की आबादीका, लेकिन इस गाँवमें १२ तालाब इसी तरह मैसूर राज्यमें उपेक्षाके ताजे दौरमें, सन् १९८० हैं। इसीके आसपास है ताल मुकेदान, आबादी है बस ई० तकमें कोई ३९,००० तालाब किसी न किसी रूपमें कोई १५०० की, पर १० तालाब हैं गाँवमें। हर चीजका लोगोंकी सेवा कर रहे थे। औसत निकालनेवालोंके लिये यह छोटा-सा गाँव आज इधर-उधर बिखरे ये सारे आँकडे एक जगह रखकर देखें तो कहा जा सकता है कि इस सदीके भी १५० लोगोंपर एक अच्छे तालाबकी सुविधा जुटा रहा है। जिस दौरमें ये तालाब बने थे, उस दौरमें आबादी प्रारम्भतक आषाढके पहले दिनसे भादोंके अन्तिम और भी कम थी। यानी तब जोर इस बातपर था कि दिनतक कोई ११ से १२ लाख तालाब भर जाते थे और अपने हिस्सेमें बरसनेवाली हरेक बूँद इकट्ठी कर ली जाय अगले जेठतक वरुण देवताका कुछ-न-कुछ प्रसाद बाँटते और संकटके समयमें आसपासके क्षेत्रोंमें भी उसे बाँट रहते थे। लिया जाय। वरुण देवताका प्रसाद गाँव अपनी अँजुलीमें क्योंकि लोग अच्छे-अच्छे काम करते जाते थे।

संख्या ८] साधन-सूत्र साधन-सूत्र [वर्तमानके कर्मींका महत्त्व] (आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) शास्त्रोंमें मनुष्य जीवनको 'कर्मयोनि' अथवा फल देनेके लिये पक गये हैं तथा हमारा भाग्य बनकर 'साधनयोनि' कहा गया है; क्योंकि इस जीवनमें उसे हमें भोगनेके लिये विवश कर रहे हैं, वे प्रारब्ध कर्म कहलाते हैं। हमारा वर्तमान जीवन पूर्वके कर्मींका कर्म करनेकी स्वतन्त्रता प्रदान की गयी है। पश्-पक्षी, कीट-पतंग आदि योनियाँ भोगयोनियाँ हैं, जिनमें कर्मीं-परिणाम है तथा इस जन्ममें हम जो कर्म कर रहे हैं, की स्वतन्त्रता नहीं है। गीताके चौदहवें अध्यायमें उनसे हमारा वर्तमान जीवन भी बनता है और भविष्यका कर्मों के करनेमें हमारी त्रिगुणात्मक प्रकृतिको कारण भी; क्योंकि कुछ कर्म तात्कालिक फल देनेवाले होते हैं बताया गया है। प्रत्येक मनुष्य सत्त्व, रज और तम-तथा कुछ कर्म समय पाकर कालान्तरमें फल देते हैं। प्रकृतिके इन तीनों गुणोंसे प्रभावित होकर कर्म करता है। कर्मींसे ही हमारे शुद्ध-अशुद्ध संस्कार बनते हैं, जो पुन: हमें तदनुसार कर्म करनेके लिये प्रेरित करते हैं। इसलिये सत्त्व गुणसे प्रेरित व्यक्ति श्रेष्ठ कर्म करता है तथा उसे सुख, ज्ञान और वैराग्य आदि निर्मल फलकी प्राप्ति होती गीता कहती है-है। वह जीवनमें सुखपूर्वक जीता है तथा अन्तमें स्वर्ग कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः। आदि उच्च लोकोंको प्राप्त करता है। रजोगुणसे प्रेरित अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥ व्यक्ति नाना प्रकारकी कामनाओंके अधीन होकर मध्यम कर्मका स्वरूप भी जानना चाहिये और अकर्मका (सांसारिक) कर्म करता है तथा उसे दु:खोंकी प्राप्ति स्वरूप भी जानना चाहिये तथा विकर्मका स्वरूप भी होती है। वह जीवनमें लोभके कारण अशान्त रहता है जानना चाहिये; क्योंकि कर्मकी गति गहन है। (गीता तथा अन्तमें पुनः मनुष्यलोकको प्राप्त करता है। तमोगुणसे ४।१७) व्यक्ति जब प्रकृतिके साथ सम्बन्ध जोड़कर प्रेरित व्यक्ति प्रमाद, मोह और अज्ञानके अधीन होकर ममता और कामनासहित क्रिया करता है तो वह क्रिया निम्न कर्म करता है तथा उसे यातनाओंसे भरा निकृष्ट 'कर्म' बनकर फल देनेवाली हो जाती है। जब वह जीवन मिलता है। अन्तमें वह अधोगतिको अर्थात् कीट, निष्कामभावसे फलकी अपेक्षा न करते हुए कर्म करता पशु, वृक्ष आदि नीच योनियों तथा नरकोंको प्राप्त करता है तो वह कर्म 'अकर्म' बनकर रह जाता है तथा फल है। इन तीनों गुणोंसे अतीत (गुणातीत) व्यक्ति जन्म, देनेवाला नहीं होता है। इसके अतिरिक्त शास्त्र-विरुद्ध मृत्यु, वृद्धावस्था और सब प्रकारके दु:खोंसे मुक्त होकर अथवा निषिद्ध आचरण 'विकर्म' कहलाते हैं। सकाम परमानन्दको प्राप्त करता है तथा परमात्माके स्वरूपको कर्म हमें अपनी प्रकृतिके अनुसार शुभ-अशुभ कर्मोंसे बाँधते हैं, निष्काम कर्मोंसे हम बाँधते नहीं हैं तथा विकर्म प्राप्त कर लेता है। अत: शास्त्रोंमें कर्मींके महत्त्वपर बल दिया गया है: हमें निश्चय ही अवनतिके गर्तमें ले जाते हैं। क्योंकि कर्म ही हमारे जीवनको श्रेष्ठ, साधारण और प्रत्येक जीव अपने पूर्वजन्मके संचित कर्मींका फल अधम बनाते हैं। स्थुल रूपमें कर्म तीन प्रकारके होते वर्तमान समयमें भोगता है। उन्हींके अनुसार ही उसका हैं-क्रियमाण कर्म, संचित कर्म तथा प्रारब्ध कर्म। जो प्रारब्ध बना करता है। अगर उसके वर्तमानमें किये कर्म हम वर्तमानमें कर रहे हैं, वे क्रियमाण कर्म कहलाते जानेवाले कर्म अर्थात् क्रियमाण कर्म श्रेष्ठ नहीं हैं तो हैं, जो क्रियमाण कर्म हम कर चुके हैं, वे इकट्ने होते उनका परिणाम उसे दु:खों, चिन्ताओं, अशान्तिके रूपमें हैं तथा संचित कर्म कहलाते हैं तथा जो संचित कर्म भोगना पडेगा। कर्मोंसे बननेवाली गतिको स्पष्ट करनेके

भाग ९० लिये एक सुन्दर दृष्टान्त दिया जाता है। घर अच्छे-से-अच्छा खाना खाते हुए भी बाहर हमारा एक धनी व्यक्ति बहुत सत्संगप्रेमी तथा सन्तोंकी अपयश करती है। बता, हमने तुझे कब बासी खाना सेवा करनेवाला था। उसके घरपर साधू-महात्मा आते दिया, जो तुमने भिखारीको कहा कि हम बासी खाना रहते थे तथा वह अपनी श्रद्धा-भावनाके अनुसार उनकी खा रहे हैं और जब यह भी नहीं मिलेगा तो तुम्हारी सेवा किया करता था। वह उनके आवास, भोजन, वस्त्र तरह भीख माँगते फिरेंगे? इतना कहकर सास क्रोधमें आदिका पूरा प्रबन्ध करता था। ईश्वरकी कृपासे उसके आग-बबूला होकर बहुको अपशब्द बोलने लगी। बहुने पास अन्न, धन, वस्त्र, नौकर-चाकर, मकान आदि प्रचुर सासको शान्त करके समझानेका बहुत प्रयास किया, मात्रामें थे। इन सब सुविधाओंसे सम्पन्न होते हुए भी किंतु सास कहाँ सुननेवाली थी। उसने आवेशमें आकर वह अनासक्त रहता था तथा सत्संगको ही विशेष महत्त्व सम्पूर्ण घरको कलहका मैदान बना डाला और अपने देता था। वह इस बातको अच्छी तरहसे जानता था कि कमरेमें जाकर लेट गयी। बहु बेचारी मन-मसोसकर यह सब उसके पूर्वजन्मके शुभ कर्मींका ही परिणाम है बैठी रही और भयभीत-भावसे गृह-कार्य करने लगी। तथा वह अब जो शुभ कर्म करेगा, उससे उसका अगला सायंकाल जब ससुर घरमें आया और उसने कोप-भवनमें अपनी पत्नीको देखा और एक ओर मुरझाई-सी जन्म उत्तम होगा। अतः वह धनका सदुपयोग अधिक-से-अधिक परोपकार, परमार्थ एवं सदाचार-सम्बन्धी बैठी बहूको देखा तो समझ गया कि आज घरमें जरूर कामोंके लिये करता था। हमारे विचारों एवं आचरणका कोई विशेष बात हुई है। उसने अपनी पत्नीसे पूछा— हमारी संतानपर भी वैसा ही प्रभाव पड़ता है। धनी क्या बात है ? तब पत्नीने जले-कटे शब्दोंमें कहा—यह व्यक्तिके एक लड़की थी, जो उसीके समान उत्तम सब आपकी सुशील बहुकी करतूत है। घरमें सबसे अच्छा खाते-पीते-पहनते हुए भी बाहर हमारा अपयश विचारोंवाली हुई। युवावस्था होनेपर उस लड़कीका विवाह एक धनाढ्य परिवारमें हुआ, किंतु वह परिवार आर्थिक करती फिर रही है कि हम बासी खाते हैं तथा जब यह दृष्टिसे सम्पन्न होनेपर भी सत्संग-प्रेमी नहीं था। भी नहीं मिलेगा तो भीख माँगेंगे। ससुर यद्यपि सत्संग-एक दिन वह लड़की अपने ससुरालमें सासके पास प्रेमी नहीं था, किंतु समझदार और धैर्यवान् था। उसने बैठी थी कि उसी समय बाहरसे किसी साधुने आवाज पत्नीसे कहा कि ऐसा कहनेमें उसका कोई प्रयोजन लगायी कि देवी! कुछ खानेको मिल जाय। सासने बहुको होगा? परंतु पत्नी तो कुछ भी सुनना नहीं चाहती थी। कहा-तू जाकर भिखारीसे कह दे कि यहाँ कुछ नहीं उसने मुँह फुलाये हुए कहा—अपनी बहुसे ही पूछ लो है, आगे जाओ। बहुने सासकी आज्ञाके अनुसार बाहर क्या बात है ? ससुरने बहुसे प्यारसे पूछा—बेटी! आज आकर साधुको कहा—बाबा! आगे जाओ, यहाँ कुछ घरमें क्या बात हुई पूरी तरहसे बताओ ? तब बहूने सिर नहीं है। साधुने पूछा—तो फिर बेटी! तुम लोग क्या झुकाये हुए अति विनम्रतापूर्वक समस्त वृत्तान्त सुनाते खाते हो ? बहुने उत्तर दिया—बाबा! हम बासी भोजन हुए कहा कि पिताजी! आज एक साधु भिखारीने खा रहे हैं। साधुने पुन: पूछा—जब बासी भोजन समाप्त दरवाजेपर आकर भोजनकी माँग की तो माताजीने मुझसे हो जायगा तो फिर तुम क्या खाओगे? बहूने प्रत्युत्तरमें कहा कि जाओ, भिखारीसे कह दो कि घरमें कुछ नहीं कहा—तो फिर हम आपकी तरह दर-दरकी भीख माँगेंगे। है। मैंने इनकी आज्ञा मानकर उस साधुको यही शब्द लड़कीसे उचित उत्तर सुनकर साधु तो वहाँसे चला कहे कि यहाँ कुछ नहीं है। तब उस भिखारीने पूछा कि गया, पर सास बहु और साधुका यह वार्तालाप सुन रही तुम क्या खा रहे हो? मैंने उत्तरमें कहा—हम बासी थी। बहुके भीतर आते ही उसने उसे आडे हाथों लिया भोजन खा रहे हैं। पुन: उसने पूछा-बासी भोजन असिंग्रिस्थां विद्या शिंक्किर संस्क्रिश्वाली प्राप्त हैं अपि विद्याति विद्यापि विद्यापित समित्र हैं अपित स्वाप

संख्या ८] साधन	ा-सूत्र २७
**************************************	*******************************
बाबा! फिर आपकी तरह ही भीख माँगते फिरेंगे।	धनाढ्य तो थे ही। घरमें किसी बातकी कमी भी नहीं
यह सारी बात सुनकर ससुरने बहूसे पुन: पूछा—	थी। ससुरजीके कहे अनुसार बहूने वैसा ही किया और
बेटी! तुम्हें कब खानेको बासी भोजन मिला है? बहूने	उसी आटेकी रोटी बनाकर ससुरजीके आगे परोसी। चने
कहा—पिताजी! न तो मुझे अपने माता-पिताके घर तथा	एवं जौमिश्रित रोटी जब सेठजी खाने लगे तो वह रोटी
न ही आपके घरमें किसी सुख-सामग्रीका अभाव रहा	उनके गले नहीं उतरती थी। उस समय उन्होंने बहूसे
है। मेरा जीवन सदैव ही सुख-वैभवमें ही बीता है, किंतु	पूछा—बेटी! आज कौनसे आटेकी रोटी बनायी है,
प्रश्न यह है पिताजी! कि यह सब हमें क्यों प्राप्त है?	जिसके खानेसे गला लकड़ीके समान खुश्क हो रहा है?
भगवान्की सृष्टिमें अनेक प्राणी हैं, जिनको भरपेट	यह सुनकर बहूने पूर्ववत् नम्रतासे कहा—पिताजी! उसी
भोजन नहीं मिलता है, पहननेको वस्त्र नहीं हैं, रहनेको	गेहूँकी रोटी आज घरमें बनायी है, जिसको आपने
मकान नहीं है, जबिक हमें भगवान्ने सब कुछ दिया है।	भिखारियोंमें बाँटनेको कहा था। बहूसे यह उत्तर पाकर
यह अन्तर क्यों है ? भगवान् तो किसीके साथ भेदभाव	सेठ विस्मित हो उससे पूछने लगा कि 'ऐसा क्यों ?' तब
नहीं करते। उनकी दृष्टिमें सभी समान हैं। मैं समझती	बहूने कहा—पिताजी! इसमें हैरान होनेकी बात नहीं;
हूँ यह सब हमारे पूर्वजन्मके कर्मोंका ही सुपरिणाम है।	क्योंकि इस जन्ममें जिस प्रकारका अन्न दान किया
पूर्वजन्मके शुभ कर्मोंसे ही हमें सब प्रकारके सुख प्राप्त	जायगा, वैसा ही अन्न हमें भविष्यमें मिलेगा। मैंने
हैं। वास्तवमें इसीका नाम बासी भोजन है। अगर हम	आपको दिखानेके लिये ही ऐसा किया है। पिताजी! इस
वर्तमानमें भजन-सत्संग, साधु-महात्माओंकी सेवा, दान,	समय यदि आपको यह भोजन पसन्द नहीं है तो क्या
पुण्य आदि नहीं करेंगे तो आगेके लिये यह आशा रखना	आगे चलकर परलोकमें यह भोजन आपको रुचिकर
कि हमें सुख-सम्पत्तिके सामान मिलेंगे, यह असम्भव	लगेगा ? अपनी बातको आगे बढ़ाते हुए बहूने कहा कि
बात है। यदि हम चाहते हैं कि भविष्यमें भी हमें सब	जिस प्रकारके श्रेष्ठ क्रियमाण कर्म इस समयमें हम
प्रकारके सुख उपलब्ध हों तो अभीसे उसीके अनुकूल	करेंगे, वैसा ही फल हमें अगले जन्ममें मिलेगा।
दान-पुण्य, कथा-कीर्तन तथा परमार्थके कार्य करने	बहूकी यह बात सेठजीके हृदयमें अच्छी तरह बैठ
चाहिये तथा अपने धन एवं अमूल्य समयका श्रेष्ठ	गयी और उन्होंने अच्छे गेहूँका आटा पिसवाकर तथा
उपयोग करना चाहिये।	अच्छा भोजन बनवाकर घरके सामने अन्न-क्षेत्र शुरू
ससुरने पूछा बेटी! भिक्षा माँगनेका क्या अर्थ	कर दिया।
हुआ ? बहूने कहा—जिसने इस जीवनमें शुभ एवं श्रेष्ठ	इस दृष्टान्तका यही तात्पर्य है कि प्रत्येक मनुष्यको
कर्म नहीं किये, उसको जैसा प्रारब्धके अनुसार मिलेगा,	वर्तमानमें श्रेष्ठ एवं उत्तम कर्म करने चाहिये; क्योंकि
उसपर ही गुजर करना पड़ेगा। जैसे भिखारीको जो कुछ	वर्तमानके क्रियमाण कर्म ही संचित होकर हमारा प्रारब्ध
भी भिक्षामें मिल जाय, उसको उसीपर सन्तुष्ट रहना	बनानेवाले हैं। हमारा दुःखित वर्तमान यह विचार
पड़ता है। बहूकी विवेक एवं ज्ञानभरी बातें सुनकर ससुर	करनेके लिये बाध्य करता है कि यह सब हमारे ही किये
बहुत आश्चर्यचिकित हुआ। उसका विवेक जाग्रत् हो	हुए कर्मोंका फल है। जीवको मनुष्य-जन्ममें जो
गया तथा उसे ज्ञान एवं वैराग्य हो गया। उसने बहूसे	कर्मों की स्वतन्त्रता मिली है, उसका सदुपयोग करते हुए
कहा—पुत्री! अमुक कमरेमें जो गेहूँ, चने एवं जौ	वर्तमानके प्रारब्धको भोगते हुए भविष्यके लिये सुन्दर
मिश्रित हैं, कलसे उसको पिसवाकर भिखारियों एवं	जीवनका सर्जन करना चाहिये। हम अपने शुभ कर्मोंद्वारा
अतिथियोंको भोजन करवाया करो। वस्तुतः वह गेहूँ	आवागमनसे मुक्त हो सकते हैं तथा वर्तमानको भी श्रेष्ठ
आदि पुराना था तथा उसमें घुन भी लगे हुए थे। ससुर	एवं सुखी बना सकते हैं।
─→	

श्रीरामकथाका एक पावन-प्रसंग शरणागतवत्पल

[श्रीरामने वक्षपर अमोघ शक्ति झेली]

(आचार्य श्रीरामरंगजी) वानरोंद्वारा दिग्दिगंतको स्तम्भित करनेवाले 'जय

श्रीराम'के घनघोर घोषके मध्य श्रीराम लक्ष्मणसहित रावणकी ओर बढ़ चले। श्रीरामको पूर्णत: स्वस्थ लक्ष्मणसहित अपनी ओर बढता देखकर, एक बार तो रावणको अपने नेत्रोंपर विश्वास ही नहीं हुआ। 'वीरघातिनी निष्प्रभावी हो गयी।' इसी कारण मेरे पौरुषपर व्यंग्य करता हुआ यह विभीषण गदा कन्धेपर रखे हुए कैसी अभीत मुद्रामें किसी गजराजके समान झूमता हुआ चला आ रहा है। इन दोनों बन्धुओंसे पूर्व मुझे अपने

ही इस बन्धुको पाठ पढाना पड़ेगा।' मन-ही-मन कहते हुए, रावणने एक भीषण शक्ति विभीषणको लक्ष्य बनाकर छोड़ दी। वह उल्कापिण्ड उगलती हुई, प्रचण्ड घण्टानाद करती हुई शक्ति ज्यों ही विभीषणके समीप पहुँचनेको उद्यत देखी, रावण अट्टाहास करते

विरही! बालिवधिक! इस शक्तिके प्रहारसे यह कुलद्रोही विभीषण तो निमिषमात्रमें कालका ग्रास बनेगा ही. साथ ही तेरा शरणागतवत्सलताका पाखण्ड भी खण्डित होगा। दशकन्धर एक बाणसे कई-कई लक्ष्य बींधनेमें सदैवसे ही सिद्धहस्त रहा है। आज उसकी कीर्तिपताका

'अरे शिवधनुभंजनके अहंकारमें चूर! भार्या-

हुए बोला—

तेरे कुलगुरु इस सूर्यदेवको भी अमावस्याकी कालरात्रिके पदपीठपर डाल देगी। यदि उसकी रक्षा कर सके तो कर

ले। जगतीके चित्तको चमत्कृत करनेवाला कोई पराक्रम प्रदर्शित कर सकता है तो कर ले। रक्षेश्वर तुझे चुनौती दे रहा है।'

के उठते स्वरोंके मध्य प्रभंजनगतिसे बढ़ती हुई रावणकी

शक्ति अभी विभीषणसे हाथ-भरकी दुरीपर ही थी कि

अन्य उपाय न देखकर, तुरंत विभीषणको पीछेकर, उस

दोनों दलोंकी ओरसे 'विभीषण मारे गये, मारे गये'

शक्तिके समक्ष श्रीरामने अपना प्रशस्त वक्ष प्रस्तुत कर दिया। कवचको विदीर्ण करती हुई, एक गहरा घाव वक्षमें देती हुई, भयंकर भुजंगिनीकी भाँति फुंकारती हुई,

वह वक्षमें प्रवेश कर गयी। श्रीराम अपने ही रक्तसे नहा गये। पीताम्बर रक्ताम्बर हो गये। प्रत्यंचित धनुषकी

पकड ढीली पड गयी। आँखें फटी-की-फटी रह गयीं। वानरसेना हा-हाकार कर उठी। निशाचरदल हर्षातिरेकमें झुमते हुए, 'जय लंकेश' की ध्वनिसे आकाशको गुँजाने

लगे। सौमित्रि लक्ष्मण श्रीरामको सम्हालते हुए धरतीपर

बैठ गये। धन्वन्तरि-अंशोत्पन्न वानरराज सुषेण चिकित्सामें जुट गये। 'लंकामें अकस्मात् यह प्रसन्नताका वातावरण कैसे

उत्पन्न हो गया ?', रहस्य जाननेके लिये त्रिजटा अशोक-

वाटिकासे निकल चली। कुछ दूरीपर जाते ही, समस्त समाचारसे अवगत होकर वह खिन्नवदन लौट आयी।

जानकीके बार-बार पूछनेपर भी उसके मुखसे तो कोई शब्द नहीं निकला किंतु धान्यमालिनीकी दो दासियोंने आकर उच्च स्वरसे समस्त घटनाका वर्णन कर डाला।

संख्या ८] शरणागतवत्सल जानकी करबद्ध मुद्रामें सूर्यकी ओर देखते हुए खड़ी रावणके शब्द सुनते ही क्रोधमें भरे हुए राघवने होकर प्रार्थना करते हुए बोलीं, 'यदि मैं मन-वचन-एक प्रखर नाराचके प्रहारसे सारथिका शिरच्छेद कर कर्मसे सदैव श्रीरघुनन्दनकी किंकरी रही तो मेरे स्वामी डाला। उसके चारों अश्वोंको भी तुरंत धरती सूँघनेपर मेरे अपहर्ताका अन्त करनेके लिये निद्रा-मुक्तकी भाँति बाध्य कर दिया। रावण अपनी वेदीसे उतरकर सारथिके चैतन्य हो जायँ।' स्थानपर खडे होकर बाण बरसाने लगा। उन्होंने उसके उधर सुषेण ऋष्यमूकपर उत्पन्न कुछ औषधियाँ धनुषोंकी प्रत्यंचाएँ काटते हुए, वेदीके पृष्ठागारमें संचित आयुध-भण्डारको आग्नेयास्त्रोंसे धधका दिया। अपने जो वे आते समय ले आये थे, उनसे श्रीरामकी चिकित्सा कर ही रहे थे। प्रार्थना और साधना दोनों फलवती हो ही आयुधोंके विस्फोटसे घबराकर रावण रथसे कूदते गयीं। श्रीरामने उठकर खड़े होते ही देखा कि गदा हुए, किसी ढहते हुए स्तम्भमें उलझकर धरतीपर गिर घुमाते हुए विभीषण रावणसे विकट संघर्ष कर रहे हैं। पड़ा। उसकी बाँह पकड़कर उसे उठाते हुए, राघव हँसते उनके संकेतपर सुग्रीव-अंगदसहित मारुति दौड़ पड़े। उनका मार्ग रोकनेवाले महोदरसे सुग्रीव एवं महापार्श्वसे अंगदका द्वन्द्व युद्ध होने लगा। मारुति विरूपाक्षको धक्का देते हुए रावणके रथपर चढ़ गये। रावणके वक्षपर उछलकर चरण-प्रहार करते हुए, विभीषणको अपने अंकमें भरकर वे रथसे कूद पड़े। राघव विभीषणको सकुशल देखकर किंचित् रोषमें भरकर, क्रोधसे काँपते हुए विभीषणसे बोले—'इस प्रकार बिना सोचे-समझे, यदि जीवनसे खिलवाड़ करोगे तो विचारो इस बेचारे रामका क्या होगा?' उत्तरमें विभीषण शब्दोंको खोजते रह गये। प्रभुके वक्षपर लगे गम्भीर घावपर उनकी दृष्टि ठिठकी क्या अटकी-की-अटकी रह गयी। हिचकी बँध गयी। नेत्रोंकी निर्झिरिणीका प्रवाह ठहरना भूल गया। हुए बोले—'दशानन! जाओ। अपनी अपहृताओंके उष्ण रावण राम-लक्ष्मणके मध्यमें खड़े हुए विभीषणको अश्रुओंमें भीगे हुए अवलेपोंसे अपनी चिकित्सा कराकर, देखकर अपने सारथीको आदेश देते हुए बोला— निर्णायक रण करने आ जाओ। राघव निश्शस्त्र-दीन-'सूतराज! दीन-हीन अवस्थामें निराश्रितोंकी भाँति धरतीपर हीन अवस्थामें पड़े हुए असहाय शत्रुपर प्रहार नहीं खड़े हुए इन तापस बन्धुओंके साथ कुलद्रोही विभीषणको किया करते। मैं स्वस्थ हूँ।' रथ बढ़ाकर कुचल डालो। विधाताने अनायास कितना महोदर और महापार्श्वके शवोंको अनदेखा करते सुन्दर अवसर प्रदान किया है कि सभी एक साथ मिल हुए, विरूपाक्षका आश्रय लेता हुआ रावण दुर्गके प्रमुख रहे हैं। शीघ्रतापूर्वक इसका सदुपयोगकर संग्रामका अन्त द्वारके एक गवाक्षके गुप्त यन्त्रको सरकाकर लंकामें कर डालो।' प्रविष्ट हो गया। देखि सक्ति अति घोरा। प्रनतारति

पाछें

घोरा । प्रनतारित भंजन पन मोरा ॥ मेला । सन्मुख राम सहेउ सोइ सेला ॥ स्नेह और रक्षाका पर्व—रक्षाबन्धन

(श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)

बदलनेका दिन, भाई-बहनोंके लिये स्नेह एवं प्रेमका पर्व रक्षाबन्धनका पुनीत पर्व श्रावणमासकी पूर्णिमाको

पूरे भारतमें बड़े हर्षोल्लासके साथ मनाया जाता है। तथा व्यापारियोंके लिये समुद्र-पूजनका उत्सव—तीन

रक्षासूत्रको राखी भी कहते हैं। यह कच्चे सूत्रकी

उत्सवोंका त्रिवेणी संगम है।

मोली लाल, पीले और सफेद रंगकी होती है। कहीं-

भाद्रपद शुक्ल पंचमीको भी रक्षाबन्धनके लिये

कहीं दो रंगकी मोली भी होती है। लाल रंग शत्रुको शुभ माना जाता है। भाद्रपद शुक्ल पंचमीको ऋषिपंचमी

दबानेके लिये तथा पीला रंग हमेशा शान्तिके लिये माना कहते हैं। इसी दिन ब्राह्मण लोग तर्पणादि करते हैं। यह

दिन रक्षाबन्धनके लिये महान् शुभ एवं सिद्ध दिन माना गया है। रक्षाबन्धन करनेसे पूर्व धागोंको अभिमन्त्रित गया है। इस दिन माहेश्वरी, दायमा, ब्राह्मणोंकी कई

किया जाता है।

रक्षासूत्रका अर्थ है रक्षाकी व्यवस्था। जिस व्यक्तिके मुख्य जातियाँ, कायस्थ आदि १६ जातियाँ राखी बाँधती

रक्षासूत्र बाँधा जाता है, उसकी रक्षाकी भावना रक्षा-हैं। इस दिन बहनें उपवास रखकर भाइयोंकी दीर्घायु एवं

सूत्रमें निहित होती है। यज्ञसूत्रमें भी सांसारिक संकटोंसे सुख-शान्तिकी कामना करती हैं।

रक्षाकी भावना निहित थी। आज भी यज्ञादिमें रक्षासूत्र

बाँधनेकी परम्परा है, जिसे साधारणत: मोली कहा जाता

है। तान्त्रिक साधनामें भी गुरुजन अपने शिष्योंके

कई पौराणिक कथाएँ प्रचलित हैं-अभिमन्त्रित रक्षासूत्र बाँधते हैं, जिसका उद्देश्य होता है लक्ष्मीजीने उन्हें अपना भाई बनाया एवं नारायणको मुक्त

अनिष्टकारी भूतप्रेतादिके आक्रमणसे रक्षा। साधारण पूजन, कथामें भी रक्षासूत्र बाँधनेकी प्रथा है। बहनद्वारा

भाईकी कलाईमें राखी अर्थात् रक्षासूत्र बाँधनेमें उसकी

स्नेह-भावना तथा कल्याणकी भावना होती है। श्रावण

शुक्ल पूर्णिमाको यदि भद्रा हो तो रक्षाबन्धन नहीं करना लगे। इन्द्रने देवगुरु बृहस्पतिसे परामर्श किया कि हमारी रक्षा कैसे हो ? देवगुरु बृहस्पतिने श्रावण पूर्णिमाके दिन

चाहिये। शास्त्रोंमें वर्णित है-

भद्रायां द्वे न कर्तव्ये श्रावणी फाल्गुनी तथा।

श्रावणी नृपतिं हन्ति ग्रामं दहति फाल्गुनी॥

अर्थात् भद्रामें श्रावणी एवं फाल्गुनी दोनों कर्म

वर्जित हैं; क्योंकि भद्रामें श्रावणीसे राजाका और

फालानीसे प्रजाका अनिष्ट होता है। रक्षाबन्धन वास्तवमें स्नेह, अपनत्व, शान्ति और रक्षाका बन्धन है। देशके

भिन्न-भिन्न भागोंमें इस त्यौहारको अलग-अलग नामोंसे

पुकारा जाता है। दक्षिण भारतमें हयग्रीव-जयन्ती, उत्तर

भारतमें शकुन-महोत्सवके रूपमें, गुजरात और महाराष्ट्रमें इसे नारियल-पूर्णिमाके रूपमें मनाते हैं। कई जगह इसे राखी पुनम भी कहते हैं। श्रावणी कर्म भी इसी दिन ही

बताये। देवगुरु बृहस्पतिके निर्देशानुसार इन्द्राणीने श्रावण पूर्णिमाको प्रात:काल ही रक्षा-विधानको विधिवत् सम्पन्न

किया और अभिमन्त्रित धागोंको अपने पति देवराज इन्द्रकी कलाईपर बाँधा। इन धागोंको बाँधनेके बाद देवोंने

दानवोंपर विजय प्राप्त की। तभीसे यह पर्व प्रारम्भ हुआ। एक अन्य कथाके अनुसार भक्त श्रवणकुमार अपने

इतिहास

कराया था, उस दिन श्रावणकी पूर्णिमा थी।

रक्षाबन्धनका प्रारम्भ कब हुआ? इस सम्बन्धमें

पातालके राजा बलिके हाथपर राखी बाँधकर

पौराणिक मान्यता है कि प्राचीन समयमें देवों और

असुरोंमें भीषण युद्ध हुआ। देवता दानवोंसे पराजित होने

रक्षा-विधान करनेके लिये कहा, इसके लिये उन्होंने इन्द्रकी

पत्नी इन्द्राणीको इस विधानकी विधि और मन्त्र आदि

नेत्रहीन माता-पिताको तीर्थयात्रा कराने ले जा रहा था।

रातको श्रवणकुमारके माता-पिताको प्यास लगी। श्रवण माता-पिताके लिये जल लेने नदीतटपर गया और वहीं

संख्या ८] स्नेह और रक्षाका क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	पर्व—रक्षाबन्धन क्षक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक
=====================================	सम्पत्तिका वैभव बढ़नेपर उन्मत्त नहीं होना चाहिये।
समाचार सुनकर बहुत दुखी हुए। राजा दशरथने उन्हें	सागरकी तरह नम्र रहना चाहिये, अपने वैभवका प्रदर्शन
धैर्य बँधाया तथा श्रावणी पूर्णिमाको श्रवणकुमारकी	नहीं करना चाहिये तथा अपनी सम्पत्तिको प्रभुको अर्पण
पूजाका सर्वत्र प्रचार किया। उस दिनसे सभी सनातनी	करना चाहिये।
जन श्रवणकी पूजा करते हैं तथा पहला रक्षासूत्र उसीको	इतिहासमें ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि मेवाड़की
अर्पण करते हैं।	महारानी कर्मवतीने मुसलमान शासक हुमायूँको अत्याचारी
पौराणिक कथाके अनुसार, भगवान् विष्णुके	बहादुरशाहके आक्रमणसे मेवाड़की रक्षाके लिये राखी
वामनावतारने भी राजा बलिके रक्षासूत्र बाँधा था और	भेजी थी। एक मुसलमान शासक होते हुए भी हुमायूँने
उसके उपरान्त ही उन्हें पाताल जानेका आदेश दिया	बहनकी रक्षाके लिये राखीके महत्त्वको समझा तथा
था। आज भी रक्षाबन्धनके समय जो मन्त्र पढ़ा जाता	अपनी सेनाके साथ शत्रुओंसे मुकाबला करनेके लिये
है, उसमें इसी घटनाका जिक्र होता है—	मेवाङ जा पहुँचा।
येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबल:।	अमरनाथ–यात्राका महत्त्व भी इसी दिनसे जुड़ा
तेन त्वाम प्रतिबध्नामि रक्षे मा चल मा चल॥	हुआ है। गुरु पूर्णिमाके दिन भी श्रीनगरसे चलकर करीब
अर्थात् यह वही रक्षासूत्र है, जिससे महाबली एवं	दो सौ किलोमीटर लम्बा सफर तय करके पुजारियोंद्वारा
दानवेन्द्र बलिराजा बाँधे गये। उस रक्षासूत्रसे मैं तुम्हें भी	पवित्र छड़ी मुबारकको अमरनाथ गुफामें पहुँचाया जाता
बाँधता हूँ। हे राखी! तुम अडिग रहना। प्राचीन भारतमें	है तथा हजारों श्रद्धालु हिमलिंगके दर्शन करने यहाँ
ऋषि सामान्यतः श्रावणसे कार्तिकतकके चार महीनोंमें	पहुँचते हैं।
भ्रमण नहीं किया करते थे। इस अवधिमें वे किसी एक	आजकल लोगोंने इस पर्वको सिर्फ लेन-देनका
ही स्थानपर रुककर प्रवचन-यज्ञादि किया करते थे। यज्ञमें	औपचारिक पर्व बना दिया है। आज रक्षाबन्धनकी मूल
सिम्मिलित होनेवाले व्यक्तियोंके हाथोंमें अक्सर चिह्नके	भावना लुप्त हो गयी है। आज इस बातकी आवश्यकता
रूपमें सूत्र बाँध दिया जाता था। यही यज्ञसूत्र आगे	है कि हम सब मिलकर यह प्रण करें कि इस स्नेह एवं
चलकर रक्षा-सूत्रके रूपमें प्रयुक्त किया जाने लगा।	रक्षाके पर्वकी महत्ताको समझकर भाई-बहनके पवित्र
समुद्रके किनारे रहनेवाले लोग वरुणदेवहेतु समुद्रकी	प्रेमको कभी कम न होने देंगे। एक-दूसरेके सुख-
पूजाकर उसे नारियल अर्पण करते हैं। इस दिन नारियल	दु:खमें बराबरके भागीदार रहेंगे। इस पर्वपर बहन भाईके
अर्पण करनेसे वरुणदेव माल लाने-ले जानेवाले जहाजोंकी	कल्याणहेतु प्रार्थना करे तथा भाई बहनके रक्षणका दृढ़
रक्षा करते हैं। ' सागरे सर्वतीर्थानि' सरितासे संगम और	संकल्प करे। साथ ही हम सब यह प्रतिज्ञा भी करें कि
संगमसे सागर अधिक पवित्र होता है—ऐसा ऋषियोंने	राष्ट्र–धर्मकी रक्षाके लिये सदा तत्पर रहेंगे तथा परस्पर
कहा है। इस दिन अर्पित नारियलका फल शुभसूचक	प्रेमपूर्वक रहकर आदर्श नागरिक बनेंगे।
होता है और सृजन-शक्तिका प्रतीक माना जाता है।	आजकल ॐ, स्वास्तिक, देवी-देवताओंके चित्रोंकी
जिस तरह निदयाँ अपने सभी कूड़े-कचरेके साथ	राखियाँ भी बिकती हैं। प्राय: परिवारोंमें ऐसी आकर्षक
सागरमें आ मिलती हैं तो भी अचल सागर अपनी	राखियोंका उपयोग होने लगा है तथा राखीका उपयोग
प्रतिष्ठासे विचलित नहीं होता, उसी तरह स्थितप्रज्ञ भी	होनेके बाद उन्हें कचरेमें या इधर-उधर डाल दिया जाता
सर्वकामनाओंका अपनेमें प्रवेश होनेपर भी अपनी शान्तिको	है। इस प्रकारसे देवताओं तथा धर्मप्रतीकोंका अपमान
स्थिर रखता है। जिस तरह सर्वसम्पत्ति मिलनेपर भी	किया जा रहा है। यह शोभनीय नहीं है, राखियोंका

सागर उन्मत्त नहीं होता है, उसी तरह व्यापारीको अपनी अनादर न कर उन्हें जलमें विसर्जित करना चाहिये।

आगमोंका स्वरूप और वैखानस-आगम (डॉ० श्रीबसन्तबल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०)

अनादिकालसे अध्यात्मज्ञानकी दो समानान्तर धाराएँ चतुष्षष्ट्या तन्त्रैः सकलमतिसन्धाय भुवनम्। भारतमें अजस्न रूपसे प्रवहमान हैं। प्रथम धाराका नाम

है—श्रुतिमार्ग और द्वितीय धाराका नाम है—आगम-चतुःषष्टी च तन्त्राणि मातृणामुत्तमानि च। (कुलचूड़ामणितन्त्र १।४)

मार्ग। श्रुतिका ही अपर नाम निगम अथवा वेद है। आगम

ही तात्पर्यभेदसे तन्त्र कहलाते हैं। बौद्धादि आगमोंको चतुःषष्टिश्च तन्त्राणि मातृणामुत्तमानि तु। छोड़कर प्राय: सभी आगम श्रुतिमूलक होनेसे वेदार्थका

ही प्रतिपादन करते हैं और वेदके उपबृंहणरूप हैं। 'आगम' शब्दकी संयोजनाके विषयमें जो अति इन नामोंसे पृथक्-पृथक् चौंसठ भेद किये गये हैं। इस

प्रसिद्ध श्लोक है। वह इस प्रकार है—

आगतं शिववक्त्रेभ्यो गतं च गिरिजाश्रुतौ।

श्रीवासुदेवस्य तस्मादागम उच्यते॥

(रुद्रयामलतन्त्र-शाक्तानन्दतरंगिणी)

इसका तात्पर्य यह है कि भगवान् वासुदेवके

सिद्धान्त किंवा अभिमतके वक्ता भगवान् शिव हैं और श्रोता भगवती पार्वती हैं। आगतं पदका 'आ' गतं पदका 'ग' और 'मतं' पदका 'म'—इन तीन अक्षरोंके संयोगसे

'आगम' शब्द बना है।

इस दृष्टिसे आगमके मुख्यतः तीन भेद हैं-(१) शैवागम, (२) शाक्तागम, (३) वैष्णवागम। शैवागम

इस परम्परामें भगवान् सदाशिवकी ही प्राधान्येन आराधना-उपासना होती है। भगवान् शिवसे सम्बद्ध

होनेके कारण ही ये आगम शैवागम कहलाते हैं। शैवागम मुख्यत: (१) भेदप्रतिपादक, (२) भेदाभेद-

प्रतिपादक तथा (३) अभेदप्रतिपादक—इस प्रकारसे तीन रूपोंमें प्रविभक्त हैं, इन्हें क्रमश: शिव, रुद्र तथा भैरवके

नामसे पुकारा जाता है— तन्त्रं जज्ञे रुद्रशिवभैरवाख्यमिदं त्रिधा। वस्तुतो हि त्रिधैवेयं ज्ञानसत्ता विजम्भृते॥

भेदाभेदेन तथैवाभेदगामिना। भेदेन (तन्त्रालोक, जयरथ टीका १।१८)

चौंसठ मानी गयी है-

शाक्तागम

भगवती आदिशक्ति जगज्जननीके आराधनाविषयक आगम शाक्तागम कहलाते हैं। शाक्त तन्त्रोंकी संख्या

प्रकार शाक्तागमोंका भी अत्यधिक विस्तार है। वैष्णवागम जिन आगमोंमें एकमात्र भगवान् विष्णु (सशक्तिक)

ही परम आराधनीय, वन्दनीय, पूजनीय, सेवनीय, भजनीय, कीर्तनीय तथा शरण ग्रहण करनेयोग्य निरूपित किये गये

हैं, वे आगम वैष्णवागमके नामसे प्रसिद्ध हैं।

वैष्णवागमोंके अनुसार सर्वव्यापक परमात्मा ही

भगवान् विष्णु हैं। वे ही ब्रह्मवाचक सभी नामोंके वाच्य हैं। उनकी दिव्य व्यापकता जिस प्रकार निर्गुण निराकार रूपमें है, उसी प्रकार सगुण साकार रूपमें भी है। यह

सम्पूर्ण विश्व उन परमात्मप्रभुकी ही शक्तिसे व्याप्त है। उन्होंके उन्मेष और निमेषमात्रसे संसारकी उत्पत्ति तथा

प्रलय होते हैं और वे ही जगत्का पालन करनेवाले हैं। वे निर्गुण भी हैं और सगुण भी तथा निर्गुण-सगुण दोनोंसे विलक्षण भी हैं। व्यापक होते हुए भी वे एक

देशमें अवतरित होते हैं। इस प्रकार विचारदृष्टिसे जो निर्गुण हैं, भावदृष्टिसे वे ही सगुण बन जाते हैं। इस प्रकार सर्वातिशायी विष्णु, नारायण अथवा

वासुदेवकी प्राप्तिविषयक आराधना-प्रक्रियाका प्राधान्येन निरूपण करनेवाले भक्तिपरक शास्त्र वैष्णवागम पदसे अभिहित होते हैं। वैष्णवागमोंकी भी दो प्रमुख शाखाएँ हैं— (१) पांचरात्र आगम, (२) वैखानस आगम।

(सौन्दर्यलहरी ३१)

(नित्याषोडशिकार्णव)

कहीं-कहीं विष्णुक्रान्ता, रथक्रान्ता तथा अश्वक्रान्ता—

पांचरात्र आगम—पांचरात्र आगमके अनुयायी साधक-भक्त सात्वत, भागवत, एकान्तिन, मैकान्तिन् तथा पंचकालज्ञ भी कहलाते हैं। पांचरात्र शब्दका

अनेक प्रकारसे अर्थ किया गया है-ईश्वरसंहिताके अनुसार शाण्डिल्य, औपगायन,

संख्या ८] आगमोंका स्वरूप ३	गौर वैखानस-आगम ३३

मोंजायन तथा भारद्वाज आदि ऋषियोंके तपसे प्रसन्न हुए	समाज आदि।
नारायणने इस शास्त्रका पाँच रात्रों (अहोरात्रों)-में इन्हें	विखना (विखनस) कौन हैं?
उपदेश दिया था, इसी कारण इस शास्त्रको पांचरात्र	वैखानस उपासनामें एक श्लोक अति प्रसिद्ध है,
कहा गया। नारदपांचरात्रके अनुसार रात्र शब्दका अर्थ	जो इस प्रकार है—
है ज्ञान और वह ज्ञान पाँच प्रकारका होता है—	नारायणः पिता यस्य यस्य माता हरिप्रिया।
(१) तत्त्व, (२) मुक्तिप्रद, (३) यौगिक, (४)	भृग्वादि मुनयः शिष्याः (पुत्राः) तस्मै विखनसे नमः ॥
भक्तिप्रद तथा (५) वैशेषिक।	इसका तात्पर्य है जिनके पिता साक्षात् नारायण हैं,
पंचरात्र आगमोंमें ईश्वरके पर, व्यूह, विभव और	जिनकी माता विष्णुप्रिया भगवती लक्ष्मी हैं और भृगु,
अर्चा—ये चार रूप प्रसिद्ध हैं, साथ ही एक अन्य	मरीचि आदि मुनिगण जिनके शिष्य (पुत्र) हैं, उन
अन्तर्यामी रूप भी है। इस प्रकार पंचावतारके रूपमें	भगवान् विखनाको नमस्कार है।
पांचरात्र शब्दकी सार्थकता सिद्ध की गयी है।	इस श्लोकके अनुसार विखना मुनि भगवान् नारायणके
रात्र शब्द अहोरात्रका वाचक है और पंच शब्द	पुत्ररूप हैं। महर्षि भृगुप्रोक्त अर्चनाधिकार तथा खिलाधिकारमें
पाँच क्रियाओंका बोधक है, वे क्रियाएँ हैं (१)	भगवान् नारायण तथा विखनामें पिता-पुत्रके सम्बन्धको
अभिगमन, (२) उपादान, (३) इज्या, (४) स्वाध्याय	स्वीकार किया गया है। महर्षि भृगुप्रोक्त क्रियाधिकारमें
तथा (५) योग। ये पाँचों क्रियाएँ एक ही दिन	विखनाको विष्णुरूप तथा मुनियोंमें प्रथम मुनि कहा गया है—
(अहोरात्र-रात्र)-में जिस आगममें नियतरूपसे सम्पन्न	विखना वै विष्णुः तज्जा वैखानसाः स्मृताः।
की जाती हैं, उसे पांचरात्र कहते हैं।	विष्णुवंशजश्च विखना मुनीनां प्रथमो मुनि:॥
अहिर्बुध्न्यसंहिता, जयाख्यसंहिता, सात्वतसंहिता,	इस प्रकार विखना शब्दसे साक्षात् नारायण, नारायणके
पांचरात्ररक्षा, पाद्मसंहिता, यतीन्द्रमतदीपिका, लक्ष्मीतन्त्र,	नाभिकमलसे समुद्भूत सृष्टिकर्ता ब्रह्मा तथा विखना
श्रीभाष्य आदि ग्रन्थोंमें इन सिद्धान्तोंकी व्याख्या हुई है।	मुनिका बोध होता है। सारांशरूपमें यह समझा जा
इनमें पांचरात्रागम-प्रक्रियासे भगवान् लक्ष्मीनारायणकी पूजा-	सकता है कि भगवान् नारायण ही सर्वप्रथम विखनाके
सपर्या प्रतिपादित है। श्रीनाथमुनि, यामुनाचार्य तथा	रूपमें आविर्भूत हुए, उस समय वे मुनिरूपमें थे, इसीलिये
श्रीरामानुजाचार्य इस श्रीवैष्णव दर्शनके मुख्य उपदेष्टा आचार्य	'मुनीनां प्रथमो मुनिः' कहे गये हैं।
हैं। षड्विधाशरणागति इस दर्शनकी मुख्य उपलब्धि है।	भगवान् नारायणने अपने मनके खननके द्वारा
इसमें द्वादश आलवार भक्तों-संतोंकी विशेष प्रतिष्ठा है।	विशेष रूपसे जिसे उत्पन्न किया, वे मुनियोंमें प्रथम
वैखानस आगम—वैष्णवागमकी जो द्वितीय धारा	विखना मुनि कहलाये—
है, वह वैखानस आगमके नामसे प्रसिद्ध है। इनकी	विखना इति प्रोक्तो मनसः खननात् सुतः।
आचार संहिता पांचरात्र आगमके समानान्तर होनेपर भी	ब्रह्मणः सुविशेषेण मुनीनां प्रथमो मुनिः॥
सैद्धान्तिक दृष्टिसे किंचित् भिन्न है। इसमें लक्ष्मीविशिष्ट	महाभारत शान्तिपर्वमें स्पष्ट रूपसे कहा गया है
नारायणकी उपासना होती है। इसलिये इनका अभिमत	कि आप्तकाम पूर्णकाम भगवान् नारायणने लीला करनेके
लक्ष्मीविशिष्टाद्वैत कहलाता है।	लिये सृष्टिकी इच्छा की और ध्यानयोगके द्वारा अपने ही
वैखानस शब्दका अर्थ	आत्मतत्त्वका खनन करके जिस मुनिश्रेष्ठको आविर्भूत
वैखानस शब्द विखनस् अथवा विखनासे बना है।	किया, वे ही विखना मुनि कहलाये।
इसका तात्पर्य है विखनस् अथवा विखनासे सम्बद्ध। इस	खननका अर्थ है—वेदान्ततत्त्वकी मीमांसा। वेदोंका
प्रकार वैखानस शब्द संज्ञा होनेपर भी विशेषणके अर्थमें	जो निगूढ़ अर्थ है, उसका विशेष रूपसे खनन करनेके
प्रयुक्त होता है। यथा—वैखानस आगम, वैखानस दर्शन,	कारण अर्थात् तत्त्वबोधको मीमांसा करनेके कारण ही
वैखानस उपासना, वैखानस दिव्य देश तथा वैखानस	हरिका विखना नाम पड़ा—

वेदान्ततत्त्वमीमांसाखननं कृतवान् हरिः। हैं। वे साक्षात् तपकी मूर्ति हैं। सब प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाले हैं। सर्वज्ञ हैं और जगत्के कल्याणमें लगे रहते नाम्ना विखनसं चक्रे तत्पदान्वर्थयोगतः॥ हैं। उनकी उपासनासे लक्ष्मीनारायणका अहैतुकी अनुग्रह विखनाकी परम्परामें उत्पन्न होनेवाले, विखनाके धर्मको माननेवाले परवर्ती सभी वैष्णव वैखानस कहलाये। सहज ही प्राप्त हो जाता है।* महामुनि विखनाके प्रादुर्भावका आख्यान ये गृहस्थ धर्म माननेवाले किंतु मुनिवृत्ति धारणकर प्राय: वैष्णवादि दिव्य देशोंमें निवास करते हैं। महर्षि मरीचिविरचित आनन्दसंहितामें विखना मुनिके विखनामुनिका ध्यान-स्वरूप आविर्भावकी एक रोचक कथा प्राप्त होती है, जिसका विखना मुनिके नामपर ही वैखानस आगम यह नाम सारांश इस प्रकार है— पड़ा है। ये सृष्टिके आदिमें विद्यमान थे, इस कारण वैखानस एक बार आप्तकाम पूर्णकाम भगवान् नारायणने आगम अत्यन्त प्राचीन है। महामुनि विखना वैखानस धर्म लीला करनेकी इच्छासे विश्वकी सर्जनाका संकल्प किया और इस कार्यके लिये उन्होंने चतुर्मुख ब्रह्माका

तथा वैखानस आगमके आदि प्रवक्ता आचार्य हैं। भगवान् विष्णुने ही विखनारूप धारणकर वैखानस धर्मका उपदेश दिया और इन्होंने ही विष्णुप्रोक्त जिन वैष्णव सिद्धान्तोंका प्रवर्तन किया, वे ही वैखानस आगमके नामसे प्रसिद्ध हुए। भगवान् नारायणके मन्दिरके दक्षिण भागमें इनके मन्दिरकी

स्थापनाका विधान निर्दिष्ट है। भगवान् लक्ष्मी-वेंकटेशके समान ही इनकी भी नित्य समूर्तार्चना होती है। वैष्णवागमोंमें इनका मन्त्र इस प्रकार निर्दिष्ट है— ॐ वैखानसायाऽच्युतसंश्रयाय तपोग्रनिष्ठाय

च ब्रह्मदर्शिने स्वाहा। ॐ विखनसे नमः। ॐ तपोयुक्ताय नमः। ॐ सिद्धिदाय नमः। ॐ सर्वदर्शिने नमः।

इनके ध्यान स्वरूपमें बताया गया है कि भगवान् विखना मुनि साक्षात् नारायण किंवा ब्रह्माके समान स्वरूपवाले हैं। वे चतुर्भुज हैं। स्फटिकके समान उनका

चक्र, ज्ञान तथा वरदमुद्रा प्रदर्शित है। वे कमण्डलु, अक्षमाला तथा दण्ड आदि धारण करते हैं। उनका बीजमन्त्र 'विं' है। वे अनेक प्रकारके वस्त्राभूषणोंसे सुशोभित रहते हैं। उनकी मुखमुद्रा अत्यन्त सौम्य तथा

उज्ज्वल वर्ण है। वे जटाधारी हैं। उनके चार हाथोंमें शंख.

सुशोभित रहते हैं। उनकी मुखमुद्रा अत्यन्त सौम्य तथा प्रसन्न है। उनके शिरोमण्डलके चतुर्दिक् एक दिव्य देदीप्यमान आभामण्डल प्रकाशित होता रहता है। वे

आप चराचर जगत्की सृष्टि करें। इस समय कलिका प्रभाव है, संसारके प्राणी अत्यन्त दुखी हैं, आलस्ययुक्त हैं, अल्प सत्त्व एवं बलवाले हैं। मनुष्योंकी बुद्धि भी अल्प हो गयी है, वे पथभ्रष्ट हैं, उन्हें कर्तव्याकर्तव्यका विवेक

स्मरण किया। स्मरण करते ही ब्रह्मा उपस्थित हो गये।

प्रतिष्ठाके लिये मैं संसारमें अवतरण करना चाहता हूँ अत:

ब्रह्मन्! धर्मकी रक्षाके लिये और वेदादि शास्त्रोंकी

तब भगवान्ने उनसे कहा—

िभाग ९०

नहीं जानते हैं, अतः उन दुखी प्राणियोंपर अनुकम्पा करनेके लिये, उनका उद्धार करनेके लिये, विशेष रूपसे भक्तोंको सहज ही प्राप्त होनेके लिये 'अर्चावतार' रूपसे मैं देवी लक्ष्मीके साथ अवतार धारण करूँगा। इसलिये हे पद्मसम्भव! मेरी अर्चापृजा करनेके लिये सर्वप्रथम आप

नहीं है। वे मेरे पर, व्यूह, विभव तथा व्यापक आत्मरूपको

एक श्रेष्ठ मुनिकी रचना करें।

मदर्चायै सृज ब्रह्मन् सृष्ट्यादौ मुनिसत्तमम्।

भगवान् नारायणसे ऐसी आज्ञा प्राप्तकर चतुर्मुख
ब्रह्माने क्षणभर विचार किया और वैसा करनेका संकल्प

लिया, किंतु वे वैसा करनेमें असमर्थ रहे और उन्होंने

भगवान्से कहा-प्रभो! आप जिस प्रकारके मुनिश्रेष्ठकी

सर्जना चाहते हैं, वैसा करना मुझसे सम्भव नहीं हो पा

रहा है, अत: आप मुझे क्षमा करें। ————————————————————— महावाहनं दोष्चतुष्कम्। मे॥

विं बीजन्तं विखनसमहं प्राप्तवन्तं भजामि॥ इसी प्रकार एक अन्य ध्यानरूप इस प्रकार निर्दिष्ट है— कुर्मासने समासीनं कुण्डलाद्यैर्विभूषितम्। श्रावणे श्रवणर्षैयं विष्णुपूजाविशारदम्॥ Hinguism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha कुर्मण्डल्वक्षमालाभिदण्डेन सुविराजितम्। ध्रुवस्य दक्षिण भाग विखमो मुनिमाश्रये॥

संख्या ८] आगमोंका स्वरूप ३	भौर वैखानस-आगम ३५
**********************************	**************************************
तब देवदेव श्रीहरिने स्वयं ही अपने आत्मस्वरूप	हे विभो! आपके द्वारा शुद्ध सत्त्वसम्पन्न, ऋषिश्रेष्ठ
भगवान् विखनाको उत्पन्न किया, जो महान् तेजस्वी तथा	महातेजस्वी इन विखनामुनिका आविर्भाव हुआ है,
शुद्धसत्त्वसम्पन्न थे। तदनन्तर नारायणकी आज्ञासे ब्रह्माने	हे प्रभो! ये आपके कार्योंको करनेमें समर्थ हैं—
सृष्टिके विस्तारका संकल्प लिया। प्रथम सांकल्पिक सृष्टिसे	'त्वत्कर्मकरणक्षमः।'
सनकादि ब्रह्मवादी पुत्रोंका आविर्भाव हुआ, किंतु	ब्रह्माजीके वचनोंको सुनकर भगवान् इन विखना
ज्ञानातिशय-वैभवके कारण वे निवृत्तिमार्गके उपासक हुए।	मुनिसे बोले—
इस कारण उनसे सृष्टिका विस्तार नहीं हुआ। ब्रह्माने पुनः	हे मुनिश्रेष्ठ! मैं जगत्में लक्ष्मीवेंकटेश नामसे अवतार
सृष्टि-कार्यको बढ़ानेमें सहायक नव (प्रकारान्तरसे दस)	धारण करूँगा और मेरी आराधना-विधिका प्रकाश करनेके
पुत्रोंको उत्पन्न किया। ये ब्रह्माजीके हृदय, सिर आदि	लिये मेरे ही द्वारा आपका सृजन हुआ है। अत: आप स्वयं
अंगोंसे उत्पन्न हुए। अंगोंसे उत्पन्न ब्रह्माजीके ये ९ पुत्र	वैष्णव-धर्मका आचरण करते हुए वैष्णव पूजा-उपासना
गुणों, शक्ति-सामर्थ्य तथा तपोबलमें ब्रह्माजीके ही समान	तथा आचार-परम्पराका प्रवर्तन कोजिये। आपद्वारा प्रवर्तित
थे, इसलिये 'नव ब्रह्माण' भी कहलाते हैं। इनके नाम इस	होनेके कारण ही वैष्णव धर्म आपके विखना नामके कारण
प्रकार हैं—१. दक्ष, २. मरीचि, ३. भृगु, ४. अंगिरा, ५.	वैखानस धर्म कहलायेगा। आपके द्वारा उपदिष्ट भृगु आदि
अत्रि, ६. पुलस्त्य, ७. पुलह, ८. वसिष्ठ, ९. क्रतु।	महर्षि जो नारायणपरायण हैं, आपके द्वारा प्रवर्तित वैखानस
ये सभी नव ब्रह्माण तथा सनकादि मुनीश्वर	धर्मका आगे विस्तार करेंगे। ऐसा कहकर भगवान् विष्णुने
भगवान् विखना मुनिके शिष्य बने। इन सभीको भगवान्	विखनाको सम्पूर्ण वैष्णव धर्मका उपदेश दिया और कहा—
विखनाने ही ज्ञानका उपदेश दिया। ब्रह्माजीने उन	यह वैष्णव धर्म श्रुतिसम्मत है और इस धर्मका अनुवर्तन
विखनामुनिको आगे करके भगवान् नारायणसे कहा—	करनेवाले भागवत कहलायेंगे—
हे देवदेव! हे जगन्नाथ! आपके प्रभावसे इन	त्वदाज्ञयैव भृग्वाद्या नारायणपरायणाः।
मुनिश्रेष्ठका सर्वप्रथम आविर्भाव हुआ है। ये मेरे	वदन्ति परमं धर्मं वैष्णवं श्रुतिसम्मतम्।
सनकादि तथा दक्षादि सभी पुत्रोंमें ज्येष्ठ हैं, पुरुषोत्तम	तद्धर्मिनिस्ता ये तु ते वै भागवताः स्मृताः॥
हैं, वैष्णवोंमें अग्रगण्य हैं और मुनियोंमें आदि मुनि हैं।	विखनामुनिप्रणीत वैखानसशास्त्र
विशेष रूपसे खननप्रक्रियाद्वारा ये प्रादुर्भूत हैं, इसलिये	भगवान् नारायणकी आज्ञा पाकर विखनामुनिने
इनका विखना ऐसा नाम प्रसिद्ध होगा—	लोककल्याणार्थं भगवान् विष्णुद्वारा प्रदिष्ट अर्थको लेकर
मत्पुत्राणाञ्च सर्वेषामग्रजः पुरुषोत्तमः।	परम हितकारी वैष्णवशास्त्रका प्रणयन किया, जो वैखानस
वैष्णवेष्वग्रजः श्रेष्ठो मुनीनां प्रथमो मुनिः॥	कल्पसूत्र या वैखानसशास्त्र कहलाता है। यह सूत्रोंमें
विशेषखननाज्जातो विष्णोर्वैखानसस्तथा।	उपनिबद्ध है। विखनामुनिने वेदकी वैखानस शाखाका
ये विखनामुनि भृगु आदि महर्षियोंका उपनयन	आश्रयणकर इन सूत्रोंका निर्माण किया। कृष्ण यजुर्वेदकी
करके उन्हें सावित्रीका उपदेश देंगे और परमात्मतत्त्व-	तैत्तिरीय शाखाको विद्वानोंने वैखानस शाखा बतलाया है,
विष्णुतत्त्वका सर्वप्रथम उपदेष्टा होनेसे 'गुरु' इस पदसे	इसका प्राचीन नाम औखेय शाखा है, इस विषयमें एक
अभिहित होंगे। इसलिये ये आदि गुरु, आदि आचार्य,	श्लोक उपलब्ध है—
आदि वैष्णव तथा आदि उपदेष्टा कहलायेंगे—	येन वेदार्थं विज्ञाय लोकानुग्रहकाम्यया।
परब्रह्मोपदेष्टासावयमेव गुरुः स्मृतः।	प्रणीतं सूत्रमौखेयं तस्मै विखनसे नमः॥
ब्रह्माजी पुनः बोले—हे जनार्दन! मेरे द्वारा जो यह	विखनामुनिकी शिष्य-परम्परा और
चराचर जगत्की सृष्टि हुई है, उसमें अखिल जगत्के	उनकी रचनाएँ
कल्याणके लिये विशेष रूपसे भक्तोंका कल्याण करनेके	आदिमुनि विखनाकी शिष्य-परम्परामें चार महर्षियोंका
लिये आप भी अवतार धारण करें—	विशेष स्थान है, जिन्होंने विखनामुनिसे उपदिष्ट होकर
भवानवतरत्वत्र मम सृष्टौ जनार्दन।	वैखानस आगमोंका निर्माणकर उनका विशेषरूपसे विस्तार

************************ आचार्य भृगुने प्रक्रियाधिकारमें बताया है कि आदि किया और इसका प्रचार-प्रसार किया। ये विखनाके शिष्य कहे गये हैं और वैखानसोंके ये ही पूर्वज भी हैं— सृष्टिमें जब भगवान् नारायणने स्वयं अपने वैष्णव धर्मके प्रवर्तनके लिये चतुर्भुज विखनामुनिको अपने अन्तस्से शिष्याः विखनसः प्रोक्ताः सर्वशास्त्रार्थपारगाः। प्रादुर्भृत किया तो उन्होंने अपना दिव्य उपदेश नैमिषारण्य विखनसानां भृग्वाद्या वंशकर्तार ईरिताः॥ इन महर्षियोंके नाम इस प्रकार हैं-तीर्थमें विखनामुनिको प्रदान किया। वैखानस आगमके ग्रन्थोंमें यह स्पष्ट निर्देश है कि विखनामुनि नैमिषारण्यमें (क) भृगु, (ख) अत्रि, (ग) कश्यप, (घ) मरीचि। वैखानस समाजमें इन चार महर्षियोंकी विशेष महिमा निवास करते थे। यहाँ तपस्या करके उन्होंने वैखानस और स्थान है तथा इनके प्रति विशेष आदरबुद्धि है। शास्त्रका निर्माण किया और अपने भृगु आदि शिष्योंको महामुनि विखनाने जिस वैखानस कल्पसूत्रका यहींपर उपदेश दिया। प्रणयन किया, उसीको चार रूपोंमें विभक्तकर इन चार वैखानस आगमका साहित्य महर्षियोंने उसका और अधिक विस्तार किया— वैखानसकल्पसूत्र तथा भृगु आदि महर्षियोंके ग्रन्थ चतुर्धाव्यष्टिरूपेण तत्सूत्रं चाभवत्पुनः। वैखानस आगमके आर्षग्रन्थ हैं। उपनिषदों, स्मृतियों आदिमें आत्रेयं भार्गवं चैव मारीचं काश्यपं त्विति॥ इसके सिद्धान्त यत्र-तत्र व्याप्त हैं। बौधायन, हारीत, सौभरि इन महर्षियोंकी रचनाओंका संक्षेपमें दिग्दर्शन इस आदि आचार्योंने इसका विस्तार किया है। पुराणोंमें तो प्रकार है— अत्यन्त वृहद् रूपसे इसका प्रतिपादन हुआ है। स्कन्द, (क) महर्षि अत्रिने चार तन्त्रोंका निर्माण किया, ब्रह्माण्ड, वराह आदि पुराणोंमें तो वैखानस आगमके परम जो १. पूर्वतन्त्र, २. आत्रेयतन्त्र, ३. विष्णुतन्त्र तथा ४. उपास्य भगवान् लक्ष्मी-वेंकटेशकी अवतार-लीलाओंका बड़ा उत्तरतन्त्रके नामसे विख्यात हुए। ही मनोरम चित्रण हुआ है, अनेकों सुन्दर आख्यान वहाँ (ख) महर्षि भृगुने खिल तन्त्र, पुरा तन्त्र आदि वर्णित हैं। साथ ही महाभारत आदिमें भी ये बातें निर्दिष्ट हैं। तेरह अधिकार ग्रन्थोंका प्रणयन किया। परवर्ती विशिष्ट आचार्योंमें नृसिंहवाजपेयी यतिन् (ग) महर्षि कश्यपने तीन काण्डोंकी रचना की, तथा श्रीनिवासमिखन् आदिका नाम विशेष महत्त्वका है। जिनके नाम इस प्रकार हैं— नृसिंहवाजपेयी यतिन्ने प्रतिष्ठाविधिदर्पण, भगवदर्चाप्रकाश १. सत्यकाण्ड, २. तर्ककाण्ड और ३. ज्ञानकाण्ड। तथा ब्रह्मोत्सवानुक्रमणिका आदि ग्रन्थोंका निर्माण किया। श्रीनिवासमिखनुका बादरायणके ब्रह्मसूत्रपर लिखा भाष्य (घ) महर्षि मरीचिने आठ संहिताओंका निर्माण किया, यथा-१. जयसंहिता, २. आनन्दसंहिता, ३. लक्ष्मीविशिष्टाद्वैत भाष्यके नामसे प्रसिद्ध है। इन्होंने संज्ञानसंहिता, ४. वीरसंहिता, ५. विजयसंहिता, ६. 'वैखानसमहिमामञ्जरी''तात्पर्यचिन्तामणि''दशविधहेतु-विजितसंहिता, ७. विमलसंहिता तथा ८. ज्ञानसंहिता। निरूपण' आदि ग्रन्थोंका निर्माण किया। उत्तरभूरि वीरराघवाचार्यका 'वैखानसविजय' ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इस समग्र साहित्यका मूल महामुनि विखनाप्रणीत वैखानससूत्र ही है-संस्कृतके साथ ही तिमल भाषामें भी अनेक प्रधान ग्रन्थोंका निर्माण हुआ है। एतेषां चतुर्विधानां मूलं तद्वैखानससूत्रम्। वैखानस आगमके मुख्य उपास्य देव तां तु वैखानसीं शाखामेतानध्यापयन्मुनिः। प्राचीन कालसे आजतक जो भी भगवान् नारायणकी वैखानस आगमके परम उपास्य देव भगवान् पूजा, अर्चना, उत्सवादि, मन्दिर-निर्माण, प्रतिष्ठा, यज्ञ-श्रीलक्ष्मीवेंकटेश हैं। वेंकटेशभगवान्का ही अपर नाम यागादि तथा आचार-विचार एवं दैनन्दिन-कृत्य वैखानस बालाजी है। कलियुगके आर्तप्राणियोंका उद्धार करनेके समाजमें होते हैं, वे इन्हीं ग्रन्थोंके आधारपर होते हैं। लिये उन्होंने तिरुपति-तिरुमलै-वेंकटाद्रि-वेंकटाचलपर इसीलिये वैखानस समाजमें इन ग्रन्थोंकी वेदवत प्रतिष्ठा है। बालाजी नामसे अवतार धारण किया।

िभाग ९०

बलात्कारके समय क्या करें ? संख्या ८] बलात्कारके समय क्या करें ? (महात्मा गांधी) एक बहनने अपने पत्रमें मुझसे नीचे लिखे सवाल खतरा तो है ही, और इसीलिये पुरुषोंको इसके सम्बन्धमें चिन्तित रहना पड़ता है। इसलिये मेरी सलाह तो यह है पूछे हैं-१. कोई दैत्य-जैसा मनुष्य राह चलती किसी बहनपर कि डरकर नहीं, बल्कि सावधानीके विचारसे स्त्रियोंको हमला करके उसपर बलात्कार करनेमें सफल हो जाय, गाँवोंमें जाकर बस जाना चाहिये और वहाँ गाँवोंकी कई तरहसे सेवा करनी चाहिये। गाँवोंमें खतरेकी कम-से-तो क्या उस बहनका सतीत्व भंग हुआ माना जायगा? २. क्या वह बहन तिरस्कारकी पात्र है? उसका कम सम्भावना है। यह याद रखना होगा कि गाँवोंमें बहिष्कार किया जा सकता है? धनवान् बहनोंको सादगी और गरीबीसे रहना पड़ेगा। ३. ऐसे संकटमें फँसी हुई स्त्री क्या करे? जनता अगर वे वहाँ कीमती गहने और कपडे पहनकर अपने क्या करे? धनका प्रदर्शन करेंगी तो एक संकटसे बचकर दूसरेमें जा तिरस्कार नहीं, दयाकी पात्र पड़ेंगी और हो सकता है कि देहातमें उन्हें एकके बदले मैं मानता हूँ कि दर असल तो इसे सतीत्व-भंग दो-दो संकटोंका सामना करना पड़े। स्त्रियाँ निर्भय बनें ही कहना होगा, लेकिन जिसपर सफल बलात्कार किया जाय, वह स्त्री किसी भी तरह तिरस्कार या बहिष्कारकी लेकिन असल चीज तो यह है कि स्त्रियाँ निर्भय पात्र नहीं, वह तो दयाकी पात्र है। उसकी गिनती बनना सीख जायँ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जो स्त्री निडर है और जो दृढतापूर्वक यह मानती है कि उसकी घायलोंमें होनी चाहिये: और इसलिये घायलोंकी सेवाकी तरह उसकी भी सेवा करनी चाहिये। पवित्रता ही उसके सतीत्वकी सर्वोत्तम ढाल है, उसका सच्चा सतीत्व-भंग तो उस स्त्रीका होता है, जो शील सर्वथा सुरक्षित है। ऐसी स्त्रीके तेजमात्रसे पशुपुरुष उसमें सम्मत हो जाती है; लेकिन जो विरोध करते हुए चौंधिया जायगा और लाजसे गड जायगा। भी घायल हो जाती है, उसके सम्बन्धमें सतीत्व–भंगकी इस लेखको पढ़नेवाली बहनोंसे मेरी सिफारिश है अपेक्षा यह अधिक उचित है कि उसपर बलात्कार कि वे अपने अन्दर हिम्मत पैदा करें। परिणाम इसका हुआ। 'सतीत्व-भंग' या व्यभिचार शब्द बदनामीका यह होगा कि वे भयसे छुटकारा पा जायँगी और निर्भय रह सकेंगी। वे स्त्रियोंमें पायी जानेवाली थरथराहट या सूचक है, इसलिये वह बलात्कारका पर्यायवाची नहीं माना जा सकता। जिसका सतीत्व बलात्कारपूर्वक नष्ट कम्पनका त्याग कर देंगी। यह कोई नियम नहीं कि हर किया गया है, उसको किसी भी तरह निन्दनीय न माना अनजान व्यक्ति पशु बन ही जाता है। बेशरमीकी इस हदतक जानेवाले लोग कम ही होते हैं। सौमें बीस ही जाय, तो ऐसी घटनाओंको छिपानेका जो रिवाज पड़ गया है, वह मिट जाय। यदि मिट जाय, तो खुले दिलसे साँप जहरीले होते हैं और बीसमें भी डँसनेवाले तो इने-गिने ही होते हैं। जबतक कोई छेडे या सताये नहीं, साँप ऐसी घटनाओंके विरुद्ध ऊहापोह कर सकेंगे।

अगर अखबारोंमें इन घटनाओंके खिलाफ ठीक-हमला नहीं करता, लेकिन डरपोकको इस ज्ञानसे कोई ठीक आवाज उठायी जाय तो छेडखानी बहुत कुछ रुक लाभ नहीं होता। वह तो साँपको देखते ही थर-थर काँपने लगता है। अतएव जरूरत तो यह है कि हर एक सकती है।

स्त्री निर्भय बननेकी शिक्षा प्राप्त करे। माता-पिताओं

आज शहरोंमें रहनेवाली प्रत्येक स्त्रीके सामने यह

और पितयोंका काम है कि वे उन्हें यह शिक्षा दें। इस अर्थको हर एक पाठक समझ लें और कण्ठाग्र कर लें। शिक्षाको प्राप्त करनेका सबसे सरल उपाय तो ईश्वरमें दर्शक पुरुष क्या करे? आस्था रखना है। अदृश्य होते हुए भी वह हर एककी यह तो स्त्रीका धर्म हुआ, लेकिन दर्शक पुरुष क्या करे ? सच पूछो तो इसका जवाब मैं ऊपर दे चुका हूँ, रक्षा करनेवाला अचुक साथी है। जिसमें यह भावना उत्पन्न हो चुकी है, वह सब प्रकारके भयोंसे मुक्त है। वह दर्शक न रहकर रक्षक बनेगा। वह खडा-खडा देखेगा नहीं। वह पुलिसको ढूँढ़ने नहीं जायगा। वह निडरता या आस्थाकी यह शिक्षा एक दिनमें नहीं मिल सकती। अतएव यह भी समझ लेना चाहिये कि रेलकी जंजीर खींचकर अपने-आपको कृतार्थ नहीं मानेगा। अगर वह अहिंसाको जानता होगा तो उसका इस दरम्यान क्या किया जा सकता है। जिस स्त्रीपर इस तरहका हमला हो, वह हमलेके समय हिंसा-अहिंसाका उपयोग करते-करते मर मिटेगा और संकटमें फँसी हुई विचार न करे। उस समय अपनी रक्षा ही उसका परम बहनको उबारेगा। अहिंसासे नहीं तो हिंसाद्वारा बहनकी धर्म है। उस वक्त जो साधन उसे सूझें, उनका उपयोग रक्षा करेगा। अहिंसा हो या हिंसा, आखिरी चीज तो करके वह अपनी पवित्रताकी और अपने शरीरकी रक्षा मौत है। मेरे समान बृढापेके कारण अशक्त और बिना करे। ईश्वरने उसे नाखून दिये हैं, दाँत दिये हैं और दाँतोंवाला बूढ़ा अगर ऐसे समय यह कहकर छूटना चाहे ताकत दी है। वह इनका उपयोग करे और करते-करते कि 'मैं तो कमजोर हूँ, यहाँ मैं क्या कर सकता हूँ ? मुझे तो अहिंसक ही रहना है।' तो उसी क्षण उसका मर जाय। मौतके भयसे मुक्त हर एक पुरुष या स्त्री स्वयं मरके अपनी और अपनोंकी रक्षा करे। सच तो यह है महात्मापन नष्ट हो जायगा और वह निन्दनीय बन कि मरना हमें पसन्द नहीं होता। इसलिये आखिर हम जायगा; क्योंकि अगर ऐसे समय वह मर-मिटनेका घुटने टेक देते हैं। कोई मरनेके बदले सलाम करना पसंद निश्चय कर ले और दोनोंके बीच जा खडा हो तो करता है, कोई धन देकर जान छुड़ाता है, कोई मुँहमें बहनकी रक्षा तो हो ही जायगी, वह उसके सतीत्व-तिनका लेता है और कोई चींटीकी तरह रेंगना पसन्द भंगका साक्षी भी न रहेगा। करता है। इसी तरह कोई स्त्री लाचार होकर जूझना इन दर्शकोंके सम्बन्धमें भी अगर वातावरण ऐसा छोड़ पुरुषकी पशुताके वश हो जाती है। बन जाय कि हिन्दुस्तानका कोई भी आदमी किसी भी ये बातें मैंने तिरस्कारवश नहीं लिखीं; केवल स्त्रीकी लाज लुटते देख नहीं सकता तो कोई भी हिन्दुस्तानी स्त्रीको हाथ लगाना भूल जायगा। किंतु वस्तु-स्थितिका ही जिक्र किया है। सलामीसे लेकर सतीत्व-भंगतककी सभी क्रियाएँ एक ही चीजकी सूचक शर्मके साथ यह कबूल करना पड़ता है कि आज हमारे वातावरणमें यह तेज नहीं है। अगर हमारी इस शर्मको हैं। जीवनका लोभ मनुष्यसे क्या-क्या नहीं कराता? अतएव जो जीवनका लोभ छोडकर जीता है, वही मिटानेवाले लोग देशमें पैदा हो जायँ तो बडा काम हो। जीवित रहता है। 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः' इस मन्त्रके (कल्याण वर्ष १६ संख्या ९ से) यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः। यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥ जहाँ स्त्रियोंका आदर किया जाता है, वहाँ देवता रमण करते हैं और जहाँ इनका अनादर होता है, वहाँ प्रमानवर्षां क्रिलिटहोत्रे हैं erv हा प्राति है://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

भाग ९०

संख्या ८] सतीका शाप कहानी— सतीका शाप (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) पिछले वर्ष^१ सौराष्ट्रकी यात्राके समय वहाँके प्रतापी उनका प्रधानमन्त्री तथा काकभट्ट-जैसा प्रसिद्ध ऐतिहासिक शहर और किसी समयकी गुर्जर देशकी योद्धा उनका सेनापति था। एकसे लेकर ग्यारहतक राजधानी अन्हिलवाड पाटन भी गया। ध्वजावाले वहाँ कई सेठ थे। (एक ध्वजाकी हैसियत आजसे १०००-१२०० वर्ष पहले यह बहुत बडा एक करोड रुपये थी)। और भव्य शहर रहा होगा, परंतु इस समय तो ट्रटे-फ्रटे जब जयसिंह छोटा-सा बच्चा था, तभी उसके खण्डहर, कुछ पुराने मन्दिर और कुएँ-बावड़ी बच गये पिता कर्णदेवका देहान्त हो गया। माता मीनल देवी हैं। अधिकांश पाटनवासी रोजगार-धन्धेके लिये अहमदाबाद, अत्यन्त चतुर, विदुषी परंतु दुर्धर्ष थी। उनके कड़े सुरत और बडौदाकी तरफ चले गये हैं, इसलिये अब नियन्त्रणमें रहकर जयसिंह अपने समयका प्रसिद्ध युद्ध-यह एक छोटा-सा कस्बामात्र रह गया है। विशारद हुआ। गुजरातके नाथके सिवाय उसे सिद्धराज मुंशीजी^२के 'पाटनका प्रभृत्व' और 'गुजरातके नाथ' भी कहा जाने लगा। पाटनकी प्रभुता गुजरातके सिवाय अन्य प्रान्तोंमें भी फैल गयी। कहा जाता है कि रुके हुए के कोट्यधीश सेठ सज्जन मेहता और मुंजाल मेहताके महल भी बड़े-बड़े भयावने खण्डहरोंमें बदल गये हैं। पानीका बाँध टूट जाता है, तो फिर वह बड़े वेगसे बढ़ वहाँपर जानेवाले पर्यटकोंको एक विशाल तालाब चलता है, किसी भी अवरोध-अटककी परवाह नहीं अवश्य दिखाया जाता है, इसके चारों तरफ पक्का पुश्ता करता। कुछ ऐसा ही मीनल देवीके देहान्तके बाद हुआ। बँधा हुआ है। चार बडी-बडी कलात्मक मकराने सिद्धराज जयसिंहके रिनवासमें बहुत ही सुन्दर रानियाँ पत्थरोंकी छतरियाँ हैं। घाटोंकी सीढ़ियाँ जैसलमेरके और दासियाँ थी, परंतु उसके मुसाहिब नित्य नयी लाल-पीले पत्थरोंसे मढ़ी हुई हैं। यद्यपि वर्षाका मौसम सुन्दरियोंकी खोजमें रहते थे। आयुके साथ-साथ राजाकी था, परंतु तालाबमें पानी बिल्कुल नहीं था। चारों तरफ कामलिप्सा बढ़ती जा रही थी। कुछ गाय-भैंसें घूम-फिर रही थीं। जूनागढ़का राजा रा-खेंगार उस समयका अद्भुत मैंने गाइडसे इसके बारेमें पूछा तो वह कुछ वीर था। उसका किला पश्चिम भारतमें नहीं, बल्कि उदासी-भरे लहजेमें कहने लगा कि यही दिखानेके लिये देशके इने-गिने किलोंमेंसे था। उसकी रानीका नाम था तो मैं आपको यहाँ लाया हूँ। राणक देवी, विवाहसे पूर्व ही वह अपनी सुन्दरता और इस तालाबके चारों तरफ कंकरीला मैदान है, शालीनताके लिये देशभरमें प्रसिद्ध थी, दूर-दूरसे लोग इसलिये वर्षाके दिनोंमें इसमें अथाह पानी आता है, परंतु उसका दर्शन करनेके लिये जूनागढ़ आते थे। थोडी देरमें ही सारा जल विलय हो जाता है। बडे-बडे जयसिंह उससे विवाह करना चाहता था, परंतु वह इंजीनियरोंने इसकी जाँच की, पेंदेमें बहुत-सी सीमेन्टकी हृदयसे रा-खेंगारको चाहती थी। जयसिंहके कड़े ढलाई की, मजबूत पत्थर जडे गये, पर फल कुछ भी अवरोधकी बिना परवाह किये रा-खेंगार उसके साथ नहीं हुआ। यहाँ इसका नाम 'शापित तालाब' है। इसके विवाह करके उसे जूनागढ़ ले गया था। पीछे एक ऐतिहासिक कथा है। मन्त्रियों, सभासदों और सेनाध्यक्षोंके विरोधके आजसे ८५० वर्ष पहले गुजरातमें एक प्रसिद्ध बावजूद जयसिंहने एक बड़ी फौज लेकर जुनागढ़के राजा सिद्धराज जयसिंहका राज्य था। वे अपने शौर्य और किलेको घेर लिया। जब बहुत दिनोंतक सफलता नहीं मिली और उसकी फौजें थकने लगीं, तब उसने वहाँके दानशीलताके लिये प्रसिद्ध थे। मुंजाल मेहता-जैसा १. यह कहानी बीसवीं सदीके मध्य भागमें लिखी गयी थी। अत: पाठकोंको इसे उसी परिप्रेक्ष्यमें समझना चाहिये। २. श्रीकन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीजी एक प्रसिद्ध गुजराती साहित्यकार एवं राजनेता थे।

टिकूको जस्सोके सामने खड़ा करके कोड़े मारनेकी दूसरे साथियोंके साथ बहादुरीसे जूझता हुआ मारा गया। जिस समय जयसिंह राणकदेवीसे मिलनेके लिये आज्ञा दी। मारसे टिकू लहुलुहान होकर बेहोशीमें एक ओर लुढ़क गया। मुँहसे खून आता देखकर जस्सोने किलेमें पहुँचा, तो वहाँ महलके एक कोनेमें उस सतीके जले हुए शरीरकी राखकी ढेरीमात्र थी। पैरोंमें महावर समझा कि वह मर गया है। लगाकर और सोलह शृंगार करके सती अपने पतिके घरसे आते समय जस्सो अपनी चोलीमें एक तेज सिरको गोदमें लेकर भस्म हो गयी थी। उसके पैरोंके निशानोंको आजतक हजारों-लाखों सधवा और कुमारी

कटारी ले गयी थी। उसे अपनी छातीमें भोंकते हुए उसने कहा—'हे दुष्ट और कामी राजा! यदि मैं मन, वचन और कर्मसे पवित्र हुँ, तो तुझे शाप देती हूँ कि तेरे इस बडे तालाबमें एक घडा पानी भी नहीं ठहरेगा,

चाहे कितनी भी वर्षा हो। लोग जब इस सुन्दर और

है। पातिव्रत्यके तेजसे सतीके स्वामीको कर्मफलका भोग नहीं करना पड़ता। वह सारे कर्मबन्धनसे छूटकर सतीके

बड़े तालाबको सूखा देखेंगे, तो तेरे इस दुष्कर्मको याद करके युग-युगतक तुझे शाप देते रहेंगे। यही नहीं, तेरे

इस बड़े राज्यको भोगनेवाला वंशधर भी नहीं पैदा होगा।' सतीके दोनों शाप सत्य हुए। जयसिंहको पुत्र नहीं

हुआ। उसका राज्य उसके प्रतिद्वन्द्वीके पुत्र कुमारपालको

राजी नहीं हुए, तो राजाको क्रोध आ गया और उसने

िभाग ९०

प्रकारके प्रलोभन दिये गये, परंतु जब वे किसी प्रकार भी मिला। [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] पुरुषाणां सहस्रं च सती स्त्री हि समुद्धरेत् । पतिः पतिव्रतानां च मुच्यते सर्वपातकात्।। नास्ति तेषां कर्मभोगः सतीनां व्रततेजसा। तथा सार्द्धं च निष्कर्मी मोदते हरिमन्दिरे॥ सती अपने सतीत्व-बलसे सहस्रों मनुष्योंका उद्धार करती है। सती स्त्रीका पित सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होता

कन्याएँ पुजती हैं। आज भी जुनागढ़में राणक देवीका महल है और वह स्थान भी है, जहाँ वह सती हुई थी। आजतक गुजरात, सौराष्ट्र और राजस्थानमें उसके नामके गीत गाये जाते हैं। कामी और क्रोधीकी विचार-शक्ति नष्ट हो जाती है। बौखलाया हुआ जयसिंह क्रोधित होकर प्रजाकी बहु-बेटियोंपर और भी अधिक अत्याचार करने लगा। एक दिन उसकी दृष्टि एक गरीब मजदूर टिकूकी पत्नी जस्सोपर पड़ी। उसके मुसाहिबोंने जस्सोको २ पैसे रोजाना मजदूरीकी जगह १० पैसे रोजानाकी मजदूरीका लालच दिया और राजमहलमें दासीके कार्य हेतू ले जानेके उद्देश्यसे उसके लिये कुछ-न-कुछ भेंट-सौगात लाने लगे। वह बेचारी देहाती महिला इन सब कुचालोंको भला क्या समझे! परंतु न जाने क्यों जस्सोके मनमें कुछ अशुभका-सा आभास हुआ। दो-तीन दिन बाद राजाके सिपाही टिकू और

जस्सोको पकडकर महलमें ले गये। पहले तो उन

दोनोंको अलग-अलग हर तरहसे समझाया गया। नाना

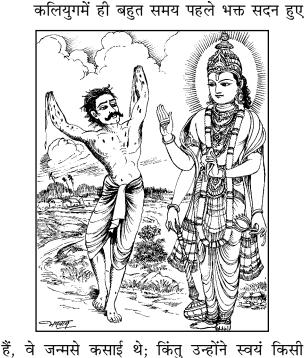
साथ भगवान्के परमधाममें आनन्दलाभ करता है। [स्कन्दपुराण]

किलेदारको मिलाकर किला फतह कर लिया। रा-खेंगार

[भक्त सदन कसाईके पूर्वजन्मकी कथा]

गोहत्यामें निमित्त बननेका परिणाम

'मांस-विक्रेताके तराजूका बाट? प्रभु शालग्रामका यह



संख्या ८]

लेते और अपनी दूकानपर तौलकर बेच देते। इस कार्य-व्यापारको भी वे यन्त्रवत् ही करते, रुचिके साथ नहीं। पारिवारिक व्यवसायके रूपमें केवल जीविकोपार्जनके

जीवका वध नहीं किया। वे दूसरे कसाइयोंसे मांस खरीद

भी उनका मन निरन्तर श्रीहरिके चरणोंमें ही रमा रहता। इनकी जिह्वासे अविकल 'हरि-हरि' का ही जप होता

रहता। भगवान्की प्रतिज्ञा है, जहाँ उनका नाम-कीर्तन होता है, वहाँ वे सदैव प्रसन्नमुद्रामें विराजमान रहते हैं।

सदनके पास भी वे शालग्रामरूपमें विराजमान थे, पर सरल-हृदय भक्त भगवानुकी उपस्थितिका रहस्य जानते

न थे। वे तो उस शालग्राम-शिलाको बाट मानकर उससे मांस तौलते थे।

एक बार एक साधु अकस्मात् उधरसे निकले, उनकी श्रद्धापूर्ण दृष्टिने शालग्रामके स्वरूपको पहचाना। उपयोग? छि:! छि:!!' घृणासे उनका मुख बिचक गया। उन्होंने सदनसे शालग्राम-शिलाकी माँग की। सदनने सोचा—'एक पत्थरके टुकड़ेसे साधु प्रसन्न होते

शालग्रामकी पूजा की, भोग लगाया, पूरे विधि-विधानका

हैं तो मेरा अहोभाग्य! मैं दूसरा पत्थर तराजूमें रख लूँगा।' सदनने साधुको शालग्राम दे दिया। पर भगवान् भक्तका पार्थक्य कैसे सहते? साधुने

पालन किया। पूजा करने और कसाईके यहाँसे शालग्रामके 'उद्धार' की भावनाके अहंकारसे वे अपनेको महान् समझ बैठे; पर भगवान् तो विधि-विधानसे कहीं अधिक भावनाके भूखे हैं। अहंकारी उपासकसे उन्हें प्रसन्नता नहीं होती, वे तो सरल सहृदय भक्तके प्रेमपर आठ-आठ

उसी रात साधुको स्वप्न हुआ। भगवान्ने कहा— 'मुझे सदनके ही यहाँ पहुँचा दो। उसके कीर्तनको सुन-सुनकर मेरा रोम-रोम पुलकित होता था। उसका स्पर्श मुझे सुखद शीतल जान पड़ता था। मेरा मन यहाँ

आँसू बहाकर उसके ही आगे-पीछे फिरते हैं।

लिये। पूर्वजन्मके संस्कारवश सारा व्यवहार करते हुए बिलकुल नहीं रमता। मुझे अपने भक्त सदनके पास ही वापस ले चलो।' साधु भय और ग्लानिसे अपनेको धिक्कारने लगे। स्वप्नकी बात सुनाते हुए उन्होंने शालग्राम वापस सदनको भेंट कर दिया तथा सदनके

> अपने-आपको कृतकृत्य माना। प्रभुकी इस कृपाका वृत्तान्त सुनकर सदन भी प्रभुके प्रेममें निमग्न हो गये। वे रो-रोकर प्रभुसे अपने दुर्व्यवहारकी क्षमा माँगने लगे। उन्होंने अपने घृणित व्यवसायको तिलांजिल दे दी और पुरुषोत्तमक्षेत्र पुरीकी यात्रापर चल पड़े।

भाग्यकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उनके दर्शनसे

जगन्नाथपुरी अभी दूर थी। मार्गमें दैवयोगसे सदन एक गृहस्थके यहाँ रात्रि व्यतीत करनेकी दृष्टिसे ठहर

िभाग ९० गये। हृदयमें हरिनाम था और थी भगवान्का दर्शन मन्दिरके लोग सदनके पास पहुँचे और उनसे पानेकी उत्कट इच्छा। उस छोटे परिवारमें पति-पत्नी— पालकीमें बैठनेका आग्रह करने लगे। सदनकी समझमें दो ही प्राणी थे। सदनका स्वस्थ शरीर तथा रूप-यौवन कुछ भी न आ रहा था। 'एक स्थानपर तो हाथ काट लिये गये, दूसरे स्थानपर पालकी आ रही है। जिस देखकर उस घरकी मालिकन इनपर आसक्त हो गयी। रात्रिके अन्धकारमें वह इनके कक्षमें आयी और अपनी भक्तवत्सलको मेरा इतना ध्यान है, उन्हें क्या हाथ वासना शान्त करनेकी कुचेष्टा करने लगी। सच्चा भक्त कटनेका पता न होगा?' सोचते-सोचते वे प्रभुके ध्यानमें प्रपंचमें कैसे फँस सकता है ? सदनजीने दीनतासे कहा— बेसुध हो गये। भक्तलोग उन्हें पालकीमें बैठाकर पुरीकी 'माताजी! मैं आपका पुत्र हूँ, मुझे क्षमा कीजिये। मैं ओर बढ़ते जा रहे थे। अभी अपनी यात्रापर चला जाता हूँ।' उस कुलटाने जगन्नाथपुरी पहुँचकर जब सदनने भगवान्को समझा कि यह मेरे पतिके कारण डर रहा है, अत: उसने दण्डवत्-प्रणाम किया और उनका नाम-कीर्तन करनेके बाहर आकर सोते हुए अपने पतिका सिर काट डाला लिये उन्मत्त हो जैसे ही उन्होंने भुजाएँ ऊपर उठायीं, और पुन: सदनके पास आकर काम-याचना करने उनके हाथ पूर्ववत् हो गये और वे 'हरि हरि बोल, *बोल हरि बोल* 'के मधुर स्वरके साथ नृत्य करने लगे। लगी—'देखो यात्री! अब इस घरमें मेरे और तुम्हारे अतिरिक्त कोई अन्य नहीं है। मैंने अपने पतिको भी नाम-स्मरण करते-करते ही उन्हें कब निद्रा आ गयी, यमलोक भेज दिया है, हमें डरनेकी कोई आवश्यकता पता नहीं चला। मनमें एक ऊहापोह उठा था कि नहीं।' वह सदनकी ओर बढ़ने लगी; पर भक्त सदनपर 'भगवन्! मेरे हाथ किस अपराधके कारण कटे थे?' इसका क्या प्रभाव होता। हताश हो वह पिशाचिनी अन्तर्यामी प्रभुसे तो हमारी कोई वृत्ति छिपी नहीं है। द्वारपर बैठकर रोने लगी—'हाय! इस यात्रीने मेरे पतिकी निद्रामग्न सदनको स्वप्न हुआ—'पूर्वजन्ममें तुम एक सदाचारी ब्राह्मण थे। एक कसाई गायके पीछे दौड़ हत्या कर दी और अब मुझे पाप-गर्तमें ढकेलना चाहता है।' रहा था। तुमने दोनों भुजाएँ गायके कण्ठमें डालकर उसे रोक दिया। इस जन्ममें वही कसाई उस स्त्रीका पति ग्रामवासी इकट्ठे हो गये। भक्त सदनके मुखपर न पश्चात्ताप था, न शोक। भगवान् और उनकी कृपामयी बना। गाय ही उस स्त्रीके रूपमें जन्मी और पूर्वजन्मका लीलाको स्मरण करते हुए वे मौन रहे। अन्तमें उन्हें बदला लेनेके लिये उसने उसका गला काटा। तुमने न्यायाधीशके सम्मुख उपस्थित होना पड़ा। वहाँ भी वे भुजाओंसे गायको रोका था, इस अपराधसे तुम्हारे हाथ कटे।' प्रभुने स्वप्नमें दर्शन दिया। भक्तका समाधान हरि-स्मरणमें ही अनुरक्त रहे। वाणी संसारकी ओरसे मौन हो गयी थी। दण्ड मिला। दोनों हाथ काटकर उन्हें हुआ। इस प्रकार गोहत्यामें निमित्त बननेके कारण भक्त नगरीसे निकाल दिया गया। प्रभुकी लीलाका गुणगान करते हुए वे पुरीकी ओर होते हुए भी सदन कसाईको हाथ कटनेका दण्ड सहन चल पड़े। प्रभुका अनुग्रह भी अनेक बार बड़ा रहस्यमय करना पड़ा। इससे यह भी सिद्ध होता है कि किये गये होता है। जगन्नाथपुरीके पुजारीको स्वप्नमें आदेश हुआ सुकृत या दुष्कृतका फल अवश्य भोगना पड़ता है, भले कि 'मेरा एक प्रिय भक्त आ रहा है। उसके हाथ कटे ही वह किसी भी जन्ममें भुगतना पड़े—'अवश्यमेव हुए हैं। उसे सम्मानपूर्वक ले आओ।' भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशभम्।' Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha व्रतोत्सव-पर्व

व्रतोत्सव-पर्व

रवि

पंचमी प्रात: ५।४० बजेतक मंगल अश्विनी सायं ६।३९ बजेतक

बुध

गुरु

रवि

सोम |

मंगल

संख्या ८]

तृतीया 🗤 १०।१३ बजेतक

षष्ठी रात्रिशेष ३।१३ बजेतक

सप्तमी रात्रिमें १२। ४७ बजेतक

अष्टमी ^{,,} १०। २३ बजेतक |

नवमी 🥠 ८। ९ बजेतक

दशमी सायं ६।८ बजेतक

एकादशी दिनमें ४। २५ बजेतक

त्रयोदशी <table-cell-rows> २। ९ बजेतक

🕠 ३।४ बजेतक

द्वितीया 😗 ३। २३ बजेतक शिन

तृतीया सायं ४। ५३ बजेतक रिव

चतुर्थी 😗 ६। ४२ बजेतक सोम

द्वादशी

चतुर्थी 🕖 ८। १ बजेतक सोम रिवती -

सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६, सूर्य दक्षिणायन, वर्षा-ऋतु, भाद्रपद कृष्णपक्ष तिथि नक्षत्र दिनांक मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि प्रतिपदा दिनमें १।४७ बजेतक | शुक्र | शतिभिषा रात्रिमें १२।४ बजेतक | १९ अगस्त | अशून्यशयनव्रत चन्द्रोदय रात्रिमें ७।१३ बजे। द्वितीया " १२। १० बजेतक शिन पू० भा० '' ११।४ बजेतक

उ० भा० 🗤 ९ । ४७ बजेतक

भरणी '' ४।५९ बजेतक

रोहिणी १११।५० बजेतक

पुनर्वसु '' १०।४९ बजेतक

पुष्य ''१०।३२ बजेतक

उ० फा० २।१४ बजेतक

हस्त 😗 ४।१८ बजेतक

चित्रा सायं ६।४२ बजेतक

😗 ८। १७ बजेतक

२० ,,

२१ ,,

भद्रा रात्रिमें ११। ११ बजेसे, **मीनराशि** सायं ५। १९ बजेसे। भद्रा दिनमें १०। १३ बजेतक, संकष्टी (बहुला) श्रीगणेशचतुर्थीव्रत,

चन्द्रोदय रात्रिमें ८।४० बजे, कज्जली तीज, मूल रात्रिमें ९।४७ बजेसे।

मेषराशि रात्रिमें ८। १७ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ८। १७ बजे।

२२ " २३ "

भद्रा रात्रिमें ३। १३ बजेसे, ललहीछठ, चन्द्रषष्ठी, चन्द्रोदय रात्रिमें १०। १० बजे, मूल सायं ६। ३९ बजेतक।

भद्रा दिनमें २। १ बजेतक, वृषराशि रात्रिमें १०। ३४ बजेसे।

28 " श्रीकृष्णजन्माष्टमीव्रत।

कृत्तिका दिनमें ३।२० बजेतक २५ 🕠

मिथुनराशि रात्रिमें १। ११ बजेसे, उदयव्यापिनी रोहिणी मतावलम्बी वैष्णवोंका श्रीकृष्णजन्मव्रत। भद्रा दिनमें ७। ९ बजेसे सायं ६। ८ बजेतक।

शनि मृगशिरा '' १२।३२ बजेतक २७ '' कर्कराशि रात्रिशेष ४। ५९ बजेसे, जया एकादशीव्रत (सबका)। आर्द्रा '' ११।३० बजेतक २८ '' २९ "

सोमप्रदोषव्रत। भद्रा दिनमें २। ९ बजे रात्रिमें १। ५५ बजेतक, पूर्वाफाल्गुनी 30 "

नक्षत्रका सूर्य रात्रिशेष ५। १२ बजेसे, मूल दिनमें १०। ३२ बजेसे। सिंहराशि दिनमें १०। ४३ बजेतक, श्राद्धकी अमावस्या।

तुलाराशि रात्रिशेष ५। ३० बजेसे, हरितालिकाव्रत (तीज)।

भद्रा प्रात: ५ । ४८ बजेसे सायं ६ । ४२ बजेतक, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत ।**

चतुर्दशी 🕠 १।४१ बजेतक | बुध | आश्लेषा 😶 १०।४३ बजेतक | ३१ 🕠 मघा ''११।२४ बजेतक |१सितम्बर | कुशोत्पाटिनी अमावस्या, मूल दिनमें ११। २४ बजेतक। अमावस्या 🕠 १। ४५ बजेतक | गुरु सं० २०७३, शक १९३८, सन् २०१६, सूर्य दक्षिणायन, वर्षा-ऋतु, भाद्रपद शुक्लपक्ष

तिथि मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि दिनांक वार नक्षत्र

प्रतिपदा दिनमें २।२१ बजेतक शुक्र पू० फा० दिनमें १२।३५ बजेतक २सितम्बर कन्याराशि रात्रिमें ७।० बजेतक।

3 "

8 11

4 11

पंचमी रात्रिमें ८। ४२ बजेतक मंगल स्वाती रात्रिमें ९। १७ बजेतक ऋषिपंचमीवृत । ٤ 11 विशाखा '' ११। ५४ बजेतक वृश्चिकराशि सायं ५। १५ बजेसे, लोलार्कषष्ठीव्रत। षष्ठी 🗤 १०।४७ बजेतक बुध 9 11

भद्रा रात्रिमें १२। ४२ बजेसे, मुल रात्रिमें २। २० बजेसे। सप्तमी 🗤 १२।४२ बजेतक गुरु अनुराधा 🕶 २। २० बजेतक 6 11 ज्येष्ठा ११४। ३१ बजेतक श्क्र 9 11

भद्रा दिनमें १।३१ बजेतक, धनुराशि रात्रिमें ४।३१ बजेसे, राधाष्टमीव्रत। अष्टमी 🗤 २। २० बजेतक नवमी 😗 ३। ३४ बजेतक |शनि मूल अहोरात्र 20 11 महानन्दानवमी।

मूल प्रातः ६। १९ बजेतक दशमी रात्रिशेष ४। २२ बजेतक रिव ११ ग **महारविवारव्रत, मूल** प्रात: ६। १९ बजेतक।

पू०षा० दिनमे ७। ३९ बजेतक सोम १२ "

भद्रा दिनमें ४। २९ बजेसे रात्रिशेष ४। ३५ बजेतक, मकरराशि एकादशी 😗 ४। ३५ बजेतक

दिनमें १। १५ बजेसे, पद्मा एकादशीव्रत (स्मार्त्त)।

एकादशीव्रत (वैष्णव), वामनद्वादशी, उत्तराफाल्गुनीका सूर्य रात्रिमें द्वादशी ''४। १९ बजेतक मंगल | उ० षा० ''८। २८ बजेतक १३ " ११। २२ बजे।

त्रयोदशी रात्रिमें ३। ३४ बजेतक बुध कुंभराशि रात्रिमें ८। ४२ बजेसे, प्रदोष्रवत, पंचकारम्भ रात्रिमें श्रवण ११८।४७ बजेतक 1189

८।४२ बजे। भद्रा रात्रिमें २। २२ बजेसे, अनन्तचतुर्दशीव्रत। चतुर्दशी ''२। २२ बजेतक गुरु धनिष्ठा ११८।३८ बजे १५ "

भद्रा दिनमें १। ३६ बजेतक, पूर्णिमा, महालयारम्भ। पूर्णिमा ''१२। ४९ बजेतक शुक्र शतभिषा ११८।२ बजे १६ ग

साधनोपयोगी पत्र

पर वह उसे स्वीकार नहीं करती। इससे हम दोनोंमें

भगवत्पूजाके भावसे धन कमाइये सप्रेम हरिस्मरण! जगत्में सब स्वार्थका ही सम्बन्ध

(१)

है। वस्तुत: कोई किसीका नहीं है। आपने माता-पिताकी

सेवाके लिये धन कमानेकी आवश्यकता बतलायी, सो ठीक है। धन कमाना बुरी बात थोड़े ही है। अच्छी

नीयतसे और न्यायपूर्वक धन जरूर कमाना चाहिये, परंतु

भाई साहब! यह वास्तवमें हाथकी बात नहीं है। प्रारब्धके अनुसार जैसा होना होगा, होगा। न्याययुक्त

चेष्टा कीजिये। भगवान्की आज्ञा मानकर-भगवान्की पूजाकी बुद्धिसे धन कमानेका प्रयत्न कीजिये। भगवान्ने

रच रखा होगा तो धन मिल जायगा। न रचा होगा तो नहीं मिलेगा। भगवान्के विधानपर संतोष करना चाहिये। भगवत्प्रेमकी बात मैं क्या लिखूँ। मैं तो प्रेमसे बहुत

दूर हूँ। हाँ, सुना है—भगवत्प्रेम बहुत ऊँची वस्तु है। मोक्षतककी इच्छाका त्याग करनेसे उस प्रेमकी प्राप्ति होती है। मैं तो एक श्रीभगवन्नामको जानता हूँ। उसका

पूरा महत्त्व तो नहीं जानता—परंतु विश्वास है कि भगवन्नामसे सब कुछ हो सकता है और आपको भी

उसीका आश्रय लेनेकी नम्र सलाह देता हूँ। आप माता-पिताकी सेवाके उद्देश्यसे, इसी कर्मके द्वारा भगवत्पूजनके भावसे भगवन्नामका जप करते हुए

धन कमानेका न्याय और सत्ययुक्त प्रयत्न करें और भगवान् फलरूपमें जो कुछ भी दें, उसीको सिर चढायें।

शेष प्रभुकृपा। (२) पत्नीसे अनुचित लाभ न उठाइये

सप्रेम हरिस्मरण! आपका पत्र मिला। आपने लिखा—'मेरी पत्नी बड़ी बुद्धिमती है, स्वभाव भी अच्छा है। सबके साथ अच्छा बर्ताव भी करती है, परंतु

मेरी सब बातें नहीं मानती। कहती है, इस बातको मानना

पाप है। मैं उसे पतिव्रता शाण्डिलीका उदाहरण देता हूँ,

विशेष धर्मवाली पतिव्रता देवीने पतिकी आज्ञासे पर-पुरुषके पास जाना स्वीकार कर लिया। परंतु जब वह

पर-पुरुषके पास पहुँची तो उसके पातिव्रत-तेजसे उस पुरुषका चित्त शुद्ध हो गया और वह उसे माता कहकर

चरणोंमें लोट गया। परशुरामने पितृ-भक्तिके विशेष धर्मको ग्रहण करके उनकी आज्ञासे अपनी सगी माता

िभाग ९०

कलह रहती है। मेरी बात मानना पाप है या न मानना।

निश्चय ही अपने पतिदेवका छायाकी भाँति अनुसरण

करना चाहिये। पतिकी बात तो क्या, उसकी प्रत्येक

रुचिका आदर करके उसे सिर चढाना चाहिये। अन्यान्य

सब धर्मोंको छोडकर केवल पतिके प्रसन्नता-सम्पादनको ही अपना परम और एकमात्र धर्म मानना चाहिये। पतिके

लिये, ऐसी कोई भी वस्तु नहीं, जिसका त्याग पतिव्रता

नहीं कर सकती, परंतु केवल इसी सिद्धान्तपर मूर्खताके

साथ चिपटे रहनेके दुराग्रहसे काम नहीं चलता। धर्म दो

तरहके होते हैं—सामान्य और विशेष। सामान्य धर्म

सबपर लागू होता है और विशेष धर्मका विशेष

परिस्थितिमें विशेष व्यक्तियोंद्वारा ही धारण होता है।

शाण्डिलीजी असाधारण देवी थीं। उन्होंने पातिव्रतके

विशेष धर्मका ही अवलम्बन किया था। इससे उनमें

ऐसी शक्ति आ गयी थी कि उनके कह देनेमात्रसे सूर्यका

उदय होना रुक गया। जो इस प्रकारकी विशेष धर्मयुक्त

शक्तिमती देवी हों, वे शाण्डिलीकी तरह पतिदेवको वेश्याके यहाँ ले जायँ तो भी कोई हर्ज नहीं। उनका वह

विशेष धर्म उनकी रक्षा करेगा और उनके पतिको भी पाप-कर्मसे बचा लेगा। ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं कि

इसके उत्तरमें निवेदन है कि पतिव्रता आर्य स्त्रीको

इस विषयमें अपनी राय लिखिये।

और तीन भाइयोंको मार दिया, परंतु उनके विशेष धर्मने

पितासे वरदान दिलवाकर उन चारोंको पुन: जिला दिया और उनको परशुरामके द्वारा मारे जानेकी बात भी याद

iख्या ८]					
<u> </u>	\$				
नहीं रही, परंतु ये बातें सबके लिये नहीं होतीं। यह	अपनी पत्नीका कृतज्ञ होना चाहिये कि जो आपको				
अनुकरण करनेकी चीज नहीं है। सामान्य धर्ममें पतिव्रता	पाप-पथपर चलनेसे रोकती हैं। पति-पत्नीका परस्पर				
पत्नीको, पितृभक्त पुत्रको, गुरुभक्त शिष्यको और स्वामिभक्त	सच्चे मित्रका नाता है और मित्रका धर्म है—'मित्रको				
सेवकको अपने पति, पिता, गुरु और स्वामीकी वहींतककी	कुमार्गसे हटाकर सुमार्गपर चलाना।' ('कुपथ निवारि				
आज्ञाओंका पालन करना चाहिये, जिनके पालनसे आज्ञा	सुपंथ <i>चलावा।</i>' रा०च०मा० ४।७।४)				
देनेवालोंको पाप न होता हो।	पतियोंने, पिताओंने, गुरुओंने और मालिकोंने अपने				
× × × ×	अधिकारका और शास्त्रकी आज्ञाओंका बड़ा दुरुपयोग				
अपनी हानि हो, अपने नरकमें जानेकी सम्भावना	किया है और बहुत अनुचित लाभ उठाया है। पतियोंने				
हो, वहाँतककी आज्ञा भी मानी जा सकती है; परंतु जिस	अपनेको परमेश्वर बतलाकर भोली स्त्रियोंसे अपनी				
आज्ञाके पालनसे आज्ञा देनेवालेको नरकमें जाना पड़े,	नारकीय पापवासनाकी पूर्तिमें सहायता प्राप्त की, पिताओंने				
ऐसी अशास्त्रीय आज्ञाको कभी नहीं मानना चाहिये।	अपनी स्वार्थसिद्धिके लिये पुत्रोंको पाप-पथपर अग्रसर				
जैसे पति अपनी पत्नीको यदि पर-स्त्रीसे व्यभिचार	किया, गुरुओंने अपनी निन्दनीय इच्छाओंकी पूर्तिके लिये				
करनेमें सहायता देनेकी या पर-पुरुषके साथ व्यवहार	शिष्य-शिष्याओंको कुमार्गपर चलाया और मालिकोंने				
करनेकी आज्ञा दे तो उसे कभी नहीं मानना चाहिये। जैसे	अपने जघन्य स्वार्थसाधनके लिये सेवकोंको चोर, डाकू,				
पिता किसी दूसरेका अहित करनेकी, चोरी-डकैती, खून	हिंसक और बदमाश बनाया। आज बड़ोंके प्रति छोटोंका				
या व्यभिचार आदिकी आज्ञा दे, अथवा स्वयं चोरी-	जो अनादर देखा जाता है, उसमें एक कारण यह भी				
जारी, हिंसा आदि पापकर्म करता हो और उसमें	है, जो प्रतिक्रियाके नियमके अनुसार अनिवार्य था।				
सहायता करनेकी आज्ञा दे तो उसे नहीं मानना ही	सचमुच आपको पत्नी बुद्धिमती हैं और साथ ही				
कर्तव्य और धर्म है। पापबुद्धि और पाप-चेष्टाका	आपकी सच्ची हितैषिणी भी हैं। आप उनका उपकार				
समर्थन करना भी पाप है, फिर पाप करना तो पाप होगा	मानिये और उनकी बुद्धिमत्तासे लाभ उठाकर अपने जीवनको				
ही। और जो इस प्रकार किसीको—पत्नी, पुत्र, शिष्य या	पवित्र बनाइये। कभी भी शाण्डिलीजीका उदाहरण देकर				
सेवकको पापमें लगायेगा, वह भी प्रेरक और समर्थक	उनके द्वारा अपनी पापवासना-पूर्तिकी चेष्टा मत कीजिये।				
होनेसे पापका भागी होगा ही। ऐसी हालतमें उसकी	शाण्डिलीजीका आचरण अपवाद है, सर्वसाधारणके लिये				
आज्ञा न माननेमें ही उसका और अपना कल्याण है।	नियम नहीं। हाँ, पतिकी पवित्र सेवामें अपने तन-मन-				
आपके पत्रसे, जबकि आप शाण्डिलीका उदाहरण	धनका उत्सर्ग कर देना स्त्रीका पवित्र धर्म है और उसका				
देनेकी बात लिखते हैं, ऐसा अनुमान होता है कि आपने	उसे अवश्य पालन करना चाहिये। याद रखना चाहिये,				
अवश्य ही किसी पापकार्य करने या करानेके लिये	पत्नीकी बुद्धिमें पति परमेश्वर है; परंतु पति अपनेको परमेश्वर				
अपनी धर्मपत्नीको आज्ञा दी होगी और उन्होंने उसे पाप	समझकर पत्नीको गुलाम समझे—यह सर्वथा अनुचित				
बतलाकर माननेसे इनकार किया होगा। यदि ऐसी बात	है। पत्नी अर्धांगिनी है और पतिके द्वारा सदा ही सम्मान				
है तो मेरी समझसे उन्होंने बहुत ठीक किया है और ऐसा	तथा सद्व्यवहार प्राप्त करनेकी अधिकारिणी है।				
ही सबको करना भी चाहिये। और आपको भी उनपर	मेरे पत्रमें कुछ कटुता आ गयी हो तो कृपया क्षमा करें।				
नाराज न होकर अपना सौभाग्य मानना चाहिये और	शेष प्रभुकृपा।				
	▶ • • • • • • • • • • • • • • • • • • •				

कृपानुभूति भगवान् शिवकी प्रत्यक्ष भक्तवत्सलता

घटना कई वर्ष पहलेकी है। पटना जिलेके एक किंतु श्री'''लापता हैं। लोगोंने बहुत छान-बीन की, किंतु वे

वे जो कुछ कहते, भगवान् शिवसे ही कहते और उनका सारा काम किसी-न-किसी प्रकार चल ही जाता। उस वर्ष वैशाख या ज्येष्ठ मासमें उनकी पुत्रीका

विवाह था। वर-पक्षवालोंने इनसे रकम तिलकके रूपमें तो ली ही थी, साथ ही बारात सजाने, रोशनी, बाजे-गाजे

आदिका भी सारा भार इन्हींके जिम्मे कर दिया था। इन्होंने सब कुछ स्वीकार कर लिया। वरके पिताने जो

कुछ कहा, इन्होंने मान लिया और दिन-रात एक करके सारी बातें पूरी कीं। सारा प्रबन्ध हुआ, किंतु विवाहके दिन बाजेका प्रबन्ध न हो सका। उस दिन 'लग्न' अधिक संख्यामें

थी, इसीलिये बहुत प्रयत्न करनेपर उन्हें कोई बाजा नहीं मिला। सन्ध्या हो चली और यह भी सूचना मिल गयी थी कि बारातके लोग आ रहे हैं और गाँवके निकट पहुँच रहे हैं। फिर भी बाजेका प्रबन्ध न हो सका। बात छोटी-सी थी, पर

उनके लिये तो यह एक बड़ी भारी समस्या हो गयी थी। गाँववालोंने भी ताना मारते हुए कहा—'आज बिना बाजेके ही बारात श्री "बाबूके द्वार लगेगी। किसीने उनकी

भक्तिकी हँसी उड़ाते हुए कहा—'सम्भवतः शिवजी अब

भी कोई प्रबन्ध कर दें।' ये सब बातें उनके लिये असह्य हो उठीं। वे चुपचाप खिसक गये और अपने आराध्यदेवके मन्दिरमें जा पहुँचे। भक्त अपने भगवानुके अतिरिक्त और किसके पास जा सकता

है। उन्होंने शिवलिंगके समक्ष रो-रोकर कहना प्रारम्भ किया— 'भगवन्! यह कौन-सी लीला कर रहे हैं? आपने सारी व्यवस्था तो कर दी, क्या एक बाजेका प्रबन्ध करना

आपके लिये कठिन था। जो कुछ अबतक हुआ है, सब आपने ही तो किया है। मैं तथा मेरे कुटुम्बके लोग तो सब निमित्तमात्र रहे हैं। अब यदि बाजेका प्रबन्ध नहीं हुआ

तो मैं मुख दिखलानेयोग्य नहीं रह जाऊँगा। बस, यही

आपसे मेरी प्रार्थना—टेक है।'

गाँवमें श्री ... नामक एक सज्जन रहते थे, जो भगवान्की कहीं न मिले। सबको चिन्ता-सी सताने लगी। लोग कहने शिवरूपमें उपासना करते थे। उनके सर्वस्व शिव ही थे। लगे—'ठीक समयपर ही वे कहाँ चले गये ? अब कैसे क्या

> होगा ?' इतनेमें ही किसीको उनकी शिव-भक्तिकी याद हो आयी। अनुमान लगाया गया कि वे शिव-मन्दिरमें होंगे। वास्तवमें खोजनेपर वे मिले भी वहीं। लोगोंने कहा—'आप यहाँ क्यों पडे हैं?' वे बोले—'बाजेका प्रबन्ध जो नहीं कर सका। अब

> क्या मुख दिखाऊँ?' उत्तर मिला—'बाजा तो बज रहा है। आप क्यों चिन्ता कर रहे हैं? सम्भवत: बारातवालोंने ही बाजेका प्रबन्ध कर लिया है।'

> बाजेका शब्द सुनायी पड़ रहा था, इसीलिये उनको विश्वास करनेमें देर न लगी। बारात द्वारपर आयी और शुभ लग्नमें विवाह हो गया।

> बड़ा सुन्दर बैंड बाजा था। लोग मुग्ध थे। ऐसा बाजा पहले उन लोगोंने नहीं सुना था। विवाह सम्पन्न हुआ। अब आया बारातवालोंको भोजन करानेका समय। इससे पहले बारातमें पूरी-मिठाई भेज दी गयी थी, उस समय सबकी अलग-

> अलग खोज नहीं की गयी थी; किंतु भोजन करानेके लिये तो खोज आवश्यक थी। सब आये; किंतु बाजेवाले नहीं आये। बारातवालोंसे पूछा गया—'आपके बाजेवाले कहाँ गये?' उत्तर मिला—'हमारे बाजेवाले कहाँ ? उन्हें तो आपने

> ही भेजा था।' वे बोले—'मैंने भेजा था, यह आपको किसने कहा?' वरके पिता—'उन्हीं बाजेवालोंने तो! हमलोग आ रहे

> थे, ये बाजेवाले रास्तेमें मिले और हमसे बोले क्या अमुक बाबू आप ही हैं ? क्या आपके ही पुत्रकी बारात अमुक गाँवमें जा रही है ? हमको श्री…ने आपके ही लिये भेजा गया है!'

> उत्तर सुनकर वे अवाक् रह गये। उन्होंने अधिक पूछताछ नहीं की। भोलेनाथकी अद्भुत कृपाका प्रत्यक्ष अनुभव करके वे रोने लगे। इतना रोये कि घिग्घी बँध गयी, किंतु इस रोनेमें

जो आनन्द था, उसका अनुभव कोई भाग्यवान् भक्त ही कर Hinर्रियाङ्गिरणिंडिएरें त्यांडेंकेरस्थितार्पेंडेकें/खडिट.पुर्वेत्रियानमार्था है MATER WITTHEOVE BY Avinash/Sha

पढो, समझो और करो संख्या ८] पढ़ो, समझो और करो उन्हें पहचानकर उसने बड़े अदबसे सलाम किया और (१) मैं तुम्हारा मित्र हूँ आज्ञा माँगी—'क्या करूँ ?' उन्होंने शान्तिपूर्वक कहा— पहलेकी बात है-कलकत्तेमें एक दिन मैं अपने 'एक घोडागाडी लाओ, इन्हें अस्पताल ले जाना है।' पड़ोसी मित्र रामप्रतापके साथ गंगा नहाने जा रहा था। कंस्टेबलने बड़े सम्मानसे कहा—'हुजूरके कपड़े भी रास्तेमें भीड थी। हम लोगोंके स्वभावमें कुछ उद्दण्डता कीचड़से भर गये हैं। हुजूर! गंगास्नानको पधारें। मैं अभी तथा अल्हड्पन था। जवान उम्र, घरमें पैसे, किसीका थानेसे दारोगाजीको कहकर और सिपाही ले आता हूँ। नियन्त्रण नहीं। हम दोनों गंगा-स्नानके पुण्यके लिये हुजूर हुक्म दें तो दारोगाजीको ही ले आऊँगा और इनको नहीं, मौजके लिये नहाने जाया करते थे। रास्तेमें मनमाना अस्पताल ले जाऊँगा। इलाजकी सब व्यवस्था हो जायगी।' बोलते, हँसते, राह चलतोंकी दिल्लगियाँ उड़ाते चलते मैं समझ गया कि ये सज्जन पुलिसके कोई बड़े अधिकारी थे। रास्तेमें कीचड़ था। एक सज्जन—कुछ अधेड़ हैं। मैं रो पडा और थर-थर कॉॅंपने लगा। मैंने उनके पैर उम्रके, चश्मा लगाये हमारे आगे-आगे जा रहे थे। पकड़ लिये। उन्होंने हँसते हुए कहा—' भैया! तरुणावस्थामें शायद कुछ श्लोक-पाठ कर रहे थे। मैंने उनको तंग अल्हडपन हुआ ही करता है। आप डरिये नहीं। हाँ, भविष्यमें इतना ध्यान रखिये कि जिसमें अपना तथा किसी करनेके लिये छेडखानी की। उन्होंने मुडकर हमलोगोंकी ओर देखा और मुसकराकर शान्तिसे चलने लगे। भी दूसरेका किसी प्रकार भी नुकसान या अहित होता हमलोग तो उनकी शान्ति भंग करना चाहते थे. अतएव हो, वैसी अल्हडता मत किया कीजिये।' मुझसे इतना कहकर बेमतलब अनाप-शनाप बकने लगे। इसपर भी उनकी उन्होंने कांस्टेबलसे कहा—'तुम ड्यूटीपर हो, इसलिये शान्ति भंग नहीं हुई। वे बीच-बीचमें हमारी ओर थाना जानेकी जरूरत नहीं है। सिर्फ एक घोड़ागाड़ी ले देखकर मुसकरा देते। पर हमलोगोंकी उद्दण्डता उनकी आओ। इनको मैं ही अस्पताल ले जाऊँगा। सहायताके हँसीको कैसे सह सकती थी। मैंने बगलसे निकलकर लिये इनके साथी ये सज्जन मेरे साथ जायँगे ही।' कोहनीसे बडे जोरसे धक्का दिया, वे कीचडमें गिर पडे मेरी विचित्र दशा थी। शरीरमें पसीना आ रहा था। और मैं ठहाका मारकर हँस पड़ा। इतनेमें देखा—मेरा डर तो था ही। साथ ही इन देवता पुलिस-अफसरके बर्तावसे मैं आश्चर्यचिकत था और मैं यह प्रत्यक्ष साथी रामप्रताप भी फिसलकर गिर पडा है। शायद उन सज्जनके गिरनेकी खुशीमें वह अपनेको सँभाल न सका अनुभव कर रहा था कि मेरा स्वभाव या जीवन ही बडी हो और उसका पैर फिसल गया हो। लोग इकट्ठे हो तेजीसे बदल रहा है। मुझे अपनी करनीपर पश्चात्ताप था। भविष्यमें वैसा कोई भी कर्म न करनेकी मैंने मन-गये। कीचडमें लथपथ वे सज्जन उठकर खडे हो गये। उनका चश्मा टूट गया। धोती, चद्दर, नहाकर पहननेको ही-मन प्रतिज्ञा की। मेरा मन उन देवमानवके चरणोंके प्रति भक्ति-श्रद्धासे अवनत हो रहा था। लाये हुए कपड़े, सारा शरीर कीचड़से लथपथ हो गया था। चश्मेके काँचकी नाकपर एक खरोंच लगी थी। गाडी आयी। मैंने तथा उन्होंने रामप्रतापको सहारा शायद और अंगोंमें भी चोट लगी हो। उन्होंने उठते ही देकर गाड़ीपर चढ़ाया। वे उसी कीचड़से सने शरीरसे मेरी ओर देखा, फिर पास ही गिरे हुए मेरे साथी अस्पताल पहुँचे। उन्हें कोई लाज-शरम नहीं आयी। उन्होंने रामप्रतापको सँभालकर उठाने लगे। रामप्रतापके दाहिने वहाँ अपना परिचय दिया; तब पता लगा कि वे पुलिसकप्तान हाथमें काफी चोट आयी थी। वह बहुत बेचैन था। (सुपरिन्टेन्डेंट) हैं और बड़े सम्भ्रान्त कुलके सज्जन हैं। उन्होंने तथा मैंने बडी कठिनतासे उसे उठाया। वह डॉक्टरोंने बडे सम्मानके साथ उन्हें बैठाया। हाथ-वेदनाके मारे अत्यन्त व्याकुल था। पैर धुलवाये। उन्होंने कहा—'हम दोनों ही कीचड़में कुछ दूर खड़े कंस्टेबलको उन्होंने पुकारा। पुकारते रपटकर गिर गये।' रामप्रतापकी समुचित चिकित्सा हुई। ही वह आया और उन सज्जनकी ओर देखकर तथा मानो हड्डी नहीं टूटी थी। दवा लगाकर पट्टी बाँध दी गयी।

भाग ९० एक दूसरी घोड़ागाड़ी मँगवाकर उन्होंने हम दोनोंको और पकड लिया गया। भाग्यवश सम्पतरामकी आर्थिक स्थिति उस समय बहुत कमजोर हो गयी थी। मामला था विदा करते हुए कहा—'भाई, डरना नहीं। मुझे तो बड़ा दु:ख इस बातका है कि आपलोगोंका मजा इन्हें तो झूठा, पर बड़ा संगीन था। जमानतकी बड़ी चिन्ता हुई। चोट लगनेसे किरकिरा हो गया। मैं ही गिरा होता तो चाचा महानन्द सब प्रकार समर्थ थे, पर उनसे वह सहायताके मेरा कुछ बिगडा नहीं था और आपका मनोरंजन हो लिये कैसे कहता। उसके मनका भाव यही था कि कहनेपर भी महानन्दजी सहायता नहीं करेंगे; क्योंकि वह उनका जाता। मैं तो गंगास्नान करने जा ही रहा था। कीचड वहाँ धुल जाता। पर भाई! जैसा मैंने इनसे कहा है, बड़ा अपमान कर चुका था। फिर महानन्दजी वहाँ थे भी नहीं। सम्पतरामने अपनेको सर्वथा असहाय अनुभव किया। ऐसे मनोरंजनकी चेष्टा मत किया करो, जिससे आपकी तथा दूसरेकी हानि हो या अहित हो। मुझे अपना मित्र महानन्दजीको उनके लडके लक्ष्मीनारायणने तारद्वारा मानना, सचमुच तुम मेरे मित्र हो और मैं तुम्हारा मित्र समाचार भेजा। लक्ष्मीनारायणके मनमें सहानुभृति नहीं हूँ। कभी कोई मेरे योग्य कार्य हो तो निस्संकोच मिलना। थी। उसने केवल सूचना दी थी। सूचना देनेमें भी उसका मेरा " नाम है।' क्या अभिप्राय था, पता नहीं। पर सूचना मिलनेकी देर हम लोग तो सुनकर चिकत हो गये। मैंने भक्ति-थी, महानन्दजी पहली ट्रेनसे आये और सीधे कोर्टमें जाकर विनम्र स्वरसे उनके चरणोंमें प्रणाम किया। सचमुच वे उसकी जमानत ली और छुडाकर अपनी ही गाडीमें हमारे यथार्थ मित्र ही थे और मित्र ही बने रहे। उनसे सम्पतरामको घर ले आये। सम्पतरामकी विचित्र दशा थी। वह अपनी करनीपर पश्चात्ताप करता हुआ रो रहा शुभकी ओर जीवन-परिवर्तनमें समय-समयपर बड़ी सहायता मिली। मित्रका धर्म ही है-था। महानन्दजी पहले बोले। कहा—'बेटा! घबराओ कुपथ निवारि सुपंथ नहीं। तुम नहीं बोलते थे—मैं भी नहीं बोलता था। पर हमलोगोंका जीवन—जो हजारों उपदेश-वाक्योंसे इससे तुम पराये थोड़े ही हो गये थे।' बड़े प्यारसे अबतक नहीं बदला था और आगे भी नहीं बदल सकता महानन्दजीने सम्पतरामके सिरपर हाथ फेरा। उसे नहला-था; क्योंकि हमें अपनी उद्दण्डताके सामने न किसीका धुलाकर चाचा-चाचीने अपने पास बैठाकर स्नेहसे भोजन उपदेश सुननेकी फुरसत थी, न श्रद्धा ही थी-आज इन कराया। उसकी पत्नी तथा बच्चोंको भी बुला लिया गया। दैवपुरुषके आचरणसे अकस्मात् बदल गया और तबसे अच्छे वकीलोंकी नियुक्ति की गयी। मामला संगीन हम भी बदल गये। - गजानन शर्मा होनेपर भी झुठा था। इससे सम्पतराम बेदाग छूट गया। चाचा-चाचीको बड़ी खुशी हुई। (२) विलक्षण सद्व्यवहार इसके बाद महानन्दजीने सम्पतरामको फिरसे पैतृक जगन्नाथजी और महानन्दजी सगे भाई थे। बडा प्रेम सम्पत्तिमें और कारोबारमें हिस्सेदार बना लिया। था। घरका बँटवारा हो चुका था, परंतु परस्पर कोई भी दरिद्रावस्थाको प्राप्त सम्पतराम पुनः लखपती हो गया। स्वार्थजनित भेद नहीं था। बडे भाई जगन्नाथजीकी मृत्यू अब तो सम्पतराम अपने चाचा श्रीमहानन्दजीको ईश्वरके होनेके बाद उनके पुत्र सम्पतरामने अपने चाचा महानन्दका तुल्य मानकर उनकी रुचिका अनुसरण करने लगा। एक बार कहना नहीं माना, बड़ी बुरी तरह पेश आया और इस व्यवस्थासे सम्पतरामको सुखी देखकर चाचीको उनकी इच्छाके विपरीत कोई ऐसा काम अपने मनसे कर सबसे अधिक प्रसन्नता हुई; क्योंकि सम्पतरामकी माताका लिया, जिससे उनके कुलकी प्रतिष्ठामें बड़ा धब्बा लगता बहुत छोटी अवस्थामें देहान्त हो गया था। सम्पतरामको था। इस बातको लेकर बड़ा मनमुटाव हो गया और वह चाचीने ही बड़े लाड़-चावसे पाला था। सम्पतराम भी यहाँतक बढ़ा कि दोनों परिवारोंमें परस्पर बोलचाल बन्द उसे माँ ही मानता और कहता था। संग-दोषसे बीचमें हो गयी। बोलना बन्द भी पहले सम्पतरामने ही किया। बुद्धि बिगडी थी। अब इस विपत्ति तथा विपत्तिके समय एक बार किसी झुठे मुकदमेंमें सम्पतराम फँस गया किये हुए चाचा-चाचीके अतुलनीय सदुव्यवहारने उसकी

पढो, समझो और करो संख्या ८] बुद्धिको पुन: सात्त्विक बना दिया। सारी दोषाग्नि चाचाकी हुए और एक सप्ताहतक—पूरे एक सप्ताहतक घरमें स्नेह-सुधा-वर्षासे सदाके लिये शान्त हो गयी। सुख-शान्तिका राज्य रहा। लक्ष्मीनारायणको पहले कुछ यह व्यवस्था प्रतिकृल-फिर पहली स्थिति आने लगी। बच्चोंने फिर अपनी छेड़खानी शुरू की; साथ ही जो काम उन्हें करने चाहिये सी लगी; परंतु पीछे वह भी समझ गया और सारा परिवार दिव्य आनन्दसमुद्रमें लहराने लगा।-रामकुमार गुप्त थे, उन्हें करना छोड दिया। इधर मुझे भी अपना पारा चढता हुआ लगा। मैं प्राय: उच्च स्वरमें पुकार उठती, 'भगवन्! (3)क्रोधपर विजय कृपा करके मेरी सहायता करो, जिससे मुझे क्रोध न आये।' यद्यपि मैंने सत्यके सम्बन्धमें अध्ययन किया है तथा जब स्थिति सरल बन जाती और फिर सुव्यवस्था छा और उसके स्वरूपको समझती भी हूँ, फिर भी अपने जाती, तब मैं पुन: निश्चय करती—' मैं क्रोधित नहीं हूँगी ' सप्तवर्षीय पुत्रके प्रति मेरे स्वभावमें बडा कोध भर गया और फिर कहती, 'प्रभु! तुझे धन्यवाद है।' बच्चोंने भी मेरे सत्संकल्पका समर्थन करना आरम्भ था। जबसे उसने घुटनोंके बल चलना आरम्भ किया, तभीसे वह कुछ ऐसी चेष्टाएँ करने लगा, जिससे मुझे किया। मैं सुनती कि वे अपने सोनेके कमरेमें कह रहे क्रोध आ जाता। शुभकी शक्तिमें मेरा विश्वास होनेपर हैं, 'आओ, और कुछ करनेके पहले हम अपने बिस्तर भी उसके प्रतिकृल तथा शान्तिके लिये प्रार्थना करते ठीक कर लें, जिससे भगवान्के सामने दिये हुए अपने रहनेपर भी, मैं उसपर बरस पड़ती (कभी-कभी तो वचनको माँ निभा सके।' पीटने भी लग जाती)। मैं प्राय: आपेसे बाहर हो जाती। अब हमारे घरमें आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया मैं जानती हूँ कि मेरे क्रोधी स्वभावने ही मुझे एक है। कभी-कभी ऐसा भी हुआ कि क्रोधको दबाये रखनेके असाध्य चर्मरोग प्रदान कर दिया, जिसे मैं पाँच वर्षींसे अपने निश्चयपर जब मैं अडिग न रह सकती, तब मैं सचमुच अपने बच्चोंके सामने घुटने टेककर भगवान्से भोगती आ रही हूँ। मेरे छोटे बच्चेको भी नासूर हो गया, जिससे वह बीच-बीचमें बहुत कम सुनने लगा। यह जानते अपनेको तथा जिस बच्चेके कारण क्रोध आया होता, हुए भी कि हमारे विचारोंका हमारे शरीरपर कितना अधिक उसको क्षमा करनेके लिये प्रार्थना करती। फिर मैं बच्चोंके प्रभाव पडता है, मैं अपने क्रोधपर विजय नहीं पा सकी। साथ बैठकर बात करती, मैं उनसे कहती 'तुमलोग मुझे वास्तवमें क्रोधका कारण मेरे पुत्रकी चेष्टाएँ उतना नहीं वैसे ही क्षमा करो जैसे कि मैंने तुमलोगोंको क्षमा कर दिया थीं, जितना उन चेष्टाओंसे भभक उठनेकी मेरी प्रकृति! है।' और फिर उनको बताती कि ' हमारे परस्परके क्षमादानके गतवर्ष लेन्टनामक व्रतके आनेके पहले मैंने क्रोधपर कारण भगवानुने भी हमको क्षमा कर दिया है।' इसके विजय प्राप्त करनेका निश्चय किया। मेरे कई मित्रोंने परिणाममें हमको स्वर्गीय सुख मिला है। और हाँ, चर्मरोगमें भी सुधार दिखायी दे रहा है। हमें उस पर्वपर अमुक-अमुक वस्तुओंका परित्याग करनेकी बात कही, तो मैंने क्रोधके परित्यागका संकल्प किया। कुछ ऐसी क्रियाएँ बतायी गयी थीं, जिनके फलस्वरूप मेरे लेन्टके प्रथम दिन ही मैंने अपने बच्चोंसे कहा कि बच्चेका नासूर भी अच्छा हो रहा है और उसकी श्रवणशक्ति 'मैंने अब भगवान्को क्रोध न करनेका वचन दे दिया है अब प्राय: ठीक है। इसमें सन्देह नहीं कि इस सुधारके और अपने वचनपर दृढ़ रहनेके लिये मुझे समस्त यथार्थ कारणको हम जानते हैं और हमारा हृदय कृतज्ञतासे परिवारकी सहायता आवश्यक है।' बच्चे बड़े प्रभावित परिप्लुत है।*-एम० एस० (एक अमेरिकन महिला) * मानसिक भावों, विचारों तथा क्रियाओंका शरीरपर न्यूनाधिक रूपसे बड़ा प्रभाव पड़ता है। 'काम' के विचारोंसे पागलपन, नपुंसकता, मधुमेह और प्रमेहके रोग उत्पन्न होते हैं। विषाद, भय और निराशाके विचारोंसे शरीरमें अशक्ति, कम्पन, अनिद्रा, सिरदर्द आदि; क्रोधके विचारोंसे पाया (एकजिमा), कुष्ठ, हृद्रोग आदि; लोभके विचारोंसे अपचन, उदरव्याधि, यकृत्-शूल आदि। इसी प्रकार अन्यान्य कुविचारोंसे विभिन्न रोग उत्पन्न होते तथा बढ़ते हैं। इसी तरह शम, दम, तितिक्षा, क्षमा, त्याग, भगवद्विश्वास, आत्माकी नित्य पूर्णता, निरामयता और अमरताके विचारोंसे रोगनाशके साथ ही विलक्षण स्वस्थता प्राप्त होती है।—सम्पादक

मनन करने योग्य

कुसंगका परिणाम

गंगाजीके किनारे गृध्रकूट नामक पर्वतपर एक 'महाराज! मैंने धर्मज्ञोंसे सुना है कि 'अहिंसा ही परम धर्म

विशाल पाकड्का वृक्ष था। उसके खोखलेमें एक अन्धा गीध रहा करता था। उसका नाम जरद्गव था। वह गीध

बूढ़ा और कमजोर था, इसलिये उस वृक्षपर रहनेवाले

सभी पक्षी अपने-अपने भोजनमेंसे थोड़ा-थोड़ा भाग उसे दे दिया करते थे। गीध भी अपने जीवनके अनुभव और

ज्ञानकी बातें सुनाकर उन सबके प्रेम तथा आदरका पात्र बना हुआ था। इस प्रकार उस वृक्षका वातावरण उन सबके

सामंजस्यसे बडा ही सुखद बना हुआ था। एक दिन दुर्भाग्यकी काली छायाके रूपमें दीर्घकर्ण

नामक एक बिलाव पिक्षयोंके बच्चोंको खानेके लिये उस पेडपर आ पहुँचा। उसे देखकर बच्चे घबडाकर चीं-चीं

करने लगे। बच्चोंका भयभीत स्वर सुनकर गीधने जोरसे पूछा—'कौन है ?' गीधकी आवाज सुनकर बिलाव भयभीत हो गया और मनमें विचार करने लगा कि हाय! मैं तो यहाँ

आया था लोभवश अपने भोजनकी तलाशमें, पर लगता है अब मैं ही मृत्युको प्राप्त हो जाऊँगा। मृत्युको सन्निकट जान उस बिलावने कपट-बुद्धिका आश्रय लिया और धीरेसे कहा—'महाराज! मैं आपको प्रणाम करता हूँ।' गीध

बोला—'तू कौन है ?' वह बोला—'मैं बिलाव हूँ।' गीधने कहा—'दूर हट जा; नहीं तो मैं तुझे मार डालूँगा।' बिलाव बोला—'महाराज! पहले मेरी बात तो सुन

लीजिये, फिर मैं मारनेयोग्य होऊँगा तो मुझे मार डालियेगा।' गीध बोला—'बता, तू किसलिये यहाँ आया है?'

बिलावने कहा—'महाराज! मैं नित्य गंगा-स्नान करता हूँ, मांस-भक्षणका त्याग करके इन्द्रिय-संयम और ब्रह्मचर्यका

पालन तथा चान्द्रायणव्रत भी करता हूँ। पक्षियोंद्वारा आपके धर्म-ज्ञानकी प्रशंसा सुनकर मैं आपके पास धर्मका रहस्य

सुनने आया हूँ। महाराज! मैं आपका अतिथि हूँ, श्रद्धा-भावसे आपके पास आया हूँ, इसलिये मेरा त्याग न कीजिये।'

गीधने कहा—'बिलाव मांसभक्षी होता है और यहाँ पक्षियोंके छोटे-छोटे बच्चे रहते हैं। मैं इन सबका रक्षक हूँ, अत: मैं

तुझे यहाँ नहीं रहने दूँगा। तेरी-मेरी मित्रता नहीं हो सकती।'

है' इसलिये मैंने मांस-भक्षण छोड़ दिया है। मैं फल और अन्नपर ही जीवन-निर्वाह कर रहा हूँ। नित्य गंगा-स्नान

और चान्द्रायणव्रतसे मेरी मनोवृत्ति बदल गयी है। आप सत्पुरुष हैं, आपका दर्शन ही मेरे लिये मंगलमय है, अत: आप मुझे अपने चरणोंमें आश्रय दें।'

बिलावकी मीठी एवं कपटभरी बातोंपर विश्वास करके गीधने उसे अपना मित्र बना लिया और वह दुरात्मा बिलाव वहीं रहने लगा।

कुछ दिन बीत जानेपर जब वह गीधका विश्वासपात्र बन गया तो उसकी मांसभोजी प्रवृत्ति उसे पक्षिशावकोंका भक्षण करनेके लिये प्रेरित करने लगी। वह यह भी समझ

गया था कि गीध अन्धा है, अत: यह मेरी हानि नहीं कर सकेगा। फिर क्या था, अगले दिनसे जब सब पक्षी अपने-अपने घोंसलोंसे भोजनकी तलाशमें दूर चले जाते तो उसने उनके घोंसलोंमें घुसकर उनके बच्चोंको खाना शुरू कर

दिया। पक्षी रोज वापस लौटकर अपने बच्चोंको न पाते तो बहुत दुखी होते। इस प्रकार बिलाव उन पक्षियोंके सभी बच्चोंको खा गया। बच्चोंको खानेके बाद वह उनकी हिंडुयोंको गीधके निवास-स्थानपर रख देता था। अन्धा होनेके कारण गीधको कुछ पता भी नहीं चल पाता था। एक दिन सभी पक्षी

गीधके आवासमें अपने बच्चोंकी हड्डियाँ देखीं तो गीधको ही अपने बच्चोंका हत्यारा समझकर उसे मार डाला। इस प्रकार दुष्टको साथ रखनेके कारण निर्दोष गीध मृत्युको प्राप्त हुआ।

घातक होता है।

इसीलिये कहा गया है कि दुष्ट व्यक्तिका साथ बेचारा गीध सभी पक्षियोंके बच्चोंकी रक्षाका उपकारी

कार्य करता था, किंतु हिंसक बिलावका संग होनेसे न केवल स्वयं मारा गया बल्कि पक्षियोंके बच्चे भी कालके गालमें चले गये। इसीलिये कुसंगसे सदा बचते रहना

शोकसे व्याकुल हो अपने बच्चोंको ढूँढ़ते हुए उस खोखले

स्थानतक आये। वहाँ उन्हें बिलाव दिखायी नहीं दिया; क्योंकि

वह तो चुपचाप वहाँसे कबका भाग चुका था। पक्षियोंने जब

Hindrash धिष्ठिकारवर्षकारके हार्रके हार्रक हार्रके हार्रके हार्रक हार्रके हार्रके हार्रक हार्रके हार्रक हार्यक हार्रक हार्यक हार्

कल्याण-ग्राहकोंसे नम्र-निवेदन

उन सभी सम्माननीय ग्राहकोंसे निवेदन है कि जिन्होंने कल्याण-२०१६ का विशेषाङ्क—'गङ्गा-अङ्क' (कूपनवाला) प्राप्त कर लिया है और उन्हें अभीतक कल्याणके मासिक अङ्क प्राप्त न हो रहे हों तो विशेषाङ्कमें लगे हुए कूपनपर अपना पूरा नाम/पता लिखकर तत्काल कल्याण-कार्यालय, गोरखपुर

अथवा गीताप्रेसकी नजदीकी दूकानपर जमा कर देवें, जिससे 'कल्याण' के मासिक-अङ्क फरवरी-२०१६ से दिसम्बर-२०१६ तक भेजे जा सकें।

अब कल्याण-विशेषाङ्क—'गङ्गा-अङ्कु' की कुछ ही प्रतियाँ सभी मासिक अंकोंके साथ शेष रह गयी

हैं, अत: अपने शुभचिन्तकों/शुभेच्छुओंको भिजवानेमें शीघ्रता करनी चाहिये।

विशेष सूचनाः — अब आप कल्याणसे सम्बन्धित जानकारी कल्याण-कार्यालय, गोरखपुरसे सीधे हेल्प लाइन नम्बर-09235400242 एवं 09235400244 पर सम्पर्क कर प्राप्त कर सकते हैं।

लाइन नम्बर-09235400242 एवं 09235400244 पर सम्पक कर प्राप्त कर सकत ह। व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', गीताप्रेस-गोरखपर—273005

श्रीकृष्णजन्माष्टमी एवं श्रीराधाष्टमीपर उपयोगी प्रमुख प्रकाशन

(श्रीकृष्णजन्माष्टमी २५ अगस्त गुरुवारको एवं श्रीराधाष्टमी ९ सितम्बर शुक्रवारको है।)

कन्हैया (कोड 869), गोपाल (कोड 870), मोहन (कोड 871), श्रीकृष्ण (कोड 872) श्रीमद्भागवतके दशम स्कन्धके आधारपर लिखी गयी चित्रकथाकी इन पुस्तकोंमें भगवान् श्रीकृष्णके जन्मसे लेकर उनके परमधामगमनतककी चुनी हुई लीलाओंसे सजाया गया है। प्रत्येकका मूल्य ₹ १५

पदरत्नाकर (कोड 50) पुस्तकाकार—इन पदोंमें भगवान् श्रीकृष्णकी मधुर लीलाओंके चित्रणके साथ ज्ञान, वैराग्य, चेतावनी आदि अनेक विषयोंपर सरल काव्यात्मक प्रकाश डाला गया है। मूल्य ₹ ९० श्रीराधा-माधव-चिन्तन (कोड 49) पुस्तकाकार—इसमें श्रीराधाकृष्णका अलौकिक प्रेम ही

रत्न सात प्रकरणोंमें विभक्त है। मूल्य ₹९० महाभाव-कल्लोलिनी (कोड 526) पुस्तकाकार—इस पुस्तकमें श्रीराधाकृष्णकी विभिन्न लीलाओंसे

श्रीराधामाधव-चिन्तनके रूपमें प्रस्फृटित है। भक्ति और शास्त्रीय चिन्तनके अद्भुत समन्वयके साथ यह ग्रन्थ-

महाभाव-कल्लोलिनी (कोड 526) पुस्तकाकार—इस पुस्तकमें श्रीराधाकृष्णकी विभिन्न लीलाओंस सम्बन्धित ११६ पदोंका संग्रह है। मूल्य ₹८

सम्बान्वत ११६ पदाका सग्रह है। मूल्य २८

मधुर (कोड 343)—इस पुस्तकमें भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी अभिन्न शक्ति श्रीराधाजी एवं महाभाग
गोपिकाओंके दिव्यातिदिव्य प्रेममय उद्गरोंका ७२ झॉॅंकियोंके रूपमें मनोहर काव्यात्मक चित्रण है। मूल्य ₹ २५

		0		0.		_		7		
		श्रीतुलसी-जयन्तीके अवसरपर पठनीय— तुलसी-साहित्य								
कोड	पुस्तक-नाम		मू०₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू०₹	कोड	पुस्तक-ना	नाम ग	
105	5 विनय-पत्रिका		४०	108	कवितावली	२०	112	हनुमानबाहुक		ч
106	गीतावली		४५	110	श्रीकृष्ण-गीतावली	१०	113	पार्वती-मंगल		ц
107	तोहावली		20	111	जानकी-मंगल	19	114	वैगग्य-मंतीपनी ।	ातं त्रात्रे	×

(श्रीतुलसी-जयन्ती १० अगस्त बुधवारको है।)

२२ वाँ दिल्ली पुस्तक-मेला सन् २०१६— इस वर्ष भी प्रगति मैदान, नयी दिल्लीमें (**दिनाङ्क २७** अगस्तसे ४ सितम्बर २०१६ तक) आयोजित दिल्ली पुस्तक-मेलामें गीताप्रेसद्वारा एक भव्य पुस्तक-स्टाल लगाकर विभिन्न भारतीय भाषाओंमें प्रकाशित अपने प्रकाशनोंके प्रदर्शन एवं बिक्रीकी व्यवस्था करनेका प्रयास है। व्यवस्थापक—गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५ (उ०प्र०)



प्र० ति० २०-७-२०१६ रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2014-2016

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2014-2016

नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार

अध्यात्म पथ-प्रदर्शक (कोड 2037)—इस पुस्तकमें सिहोर-निवासी ब्रह्मलीन संत स्वामी श्रीचिदानन्द सरस्वतीजीके कल्याणमें प्रकाशित ४५ लेखोंका संग्रह प्रकाशित किया गया है। इसमें साधकोपयोगी लगभग

सभी मुख्य विषय समाहित हैं। मुल्य ₹६०

भूले न भुलाये (कोड 2047) — प्रस्तुत कहानी-संग्रहमें कुल ३२ कहानियाँ विशिष्ट रेखाचित्रोंसिहत

प्रकाशित की गयी हैं। यद्यपि इन कहानियोंकी आधारशिला ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक है फिर

भी मानवीय जीवनकी विभिन्न अवस्थाओंकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति इनमें पूर्णरूपसे हुई है, जिसके ब्याजसे

परोक्ष अथवा अपरोक्ष नैतिक शिक्षा भी हमें प्राप्त होती है। मूल्य ₹२०

गीताव्याकरणम् (कोड 2042) सजिल्द-प्रस्तृत पुस्तकमें श्रीवरदराजकी पद्धतिका अनुसरण करते हुए

श्रीमद्भगवद्गीताके प्रयोगोंसे पाणिनीय शैलीके आधारपर संस्कृत व्याकरण समझने तथा समझानेका प्रयास

किया गया है। इसमें वरदराजकृत लघुसिद्धान्तकौमुदीके क्रमानुसार शब्द, प्रयोग तथा उदाहरण श्रीमद्भगवद्गीतासे

उद्धृत किये गये हैं, उद्देश्य यह है कि पाणिनीय पद्धितके अनुसार श्रीमद्भगवद्गीताको व्याकरणकी दुष्टिसे देखा जाय, जिससे शब्दार्थ-ज्ञानमें सरलता और सत्यता आ सके। मुल्य ₹३५

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित कर्मकाण्डकी प्रमुख पुस्तकें

[१६ सितम्बरसे पितृपक्ष (महालया) आरम्भ हो रहा है] नित्यकर्म-पूजा-प्रकाश, सजिल्द (कोड 592)—इस पुस्तकमें प्रात:कालीन भगवतस्मरणसे लेकर

स्नान, ध्यान, संध्या, जप, तर्पण, बलिवैश्वदेव, देव-पूजन, देव-स्तृति, विशिष्ट पूजन-पद्धति, पञ्चदेव-पूजन, पार्थिव-पूजन, शालग्राम-महालक्ष्मी-पूजनको विधि है। मूल्य ₹६० गुजराती, तेलुगु भी।

अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाश (कोड 1593) ग्रन्थाकार—इस ग्रन्थमें मूल ग्रन्थों तथा निबन्ध-ग्रन्थोंको आधार बनाकर श्राद्ध-सम्बन्धी सभी कृत्योंका साङ्गोपाङ्ग निरूपण किया गया है। मूल्य ₹१३०

जीवच्छ्राद्धपद्धित (कोड 1895)—प्रस्तुत पुस्तकमें जीवित श्राद्धकी शास्त्रीय व्यवस्था दी गयी है, जिसके माध्यमसे व्यक्ति अपने जीवित रहते ही मरणोत्तर क्रियाका सही सम्पादन करके कर्म-बन्धनसे मुक्त हो

सके। मृल्य ₹६० गया-श्राद्ध-पद्धति (कोड 1809)—शास्त्रोंमें पितरोंके निमित्त गया-यात्रा और गया-श्राद्धकी विशेष

महिमा बतायी गयी है। आश्विन मासमें गया-यात्राकी परम्परा है। प्रस्तृत पुस्तकमें गया-माहात्म्य, यात्राकी प्रक्रिया, श्राद्धका महत्त्व तथा श्राद्धकी प्रक्रियाको सांगोपांग ढंगसे प्रस्तृत किया गया है। मृल्य ₹३५

गरुडपुराण-सारोद्धार (कोड 1416)—श्राद्ध और प्रेतकार्यके अवसरोंपर विशेषरूपसे इसके श्रवणका

विधान है। यह कर्मकाण्डी ब्राह्मणों एवं सर्व सामान्यके लिये भी अत्यन्त उपयोगी है। मुल्य ₹३५ त्रिपिण्डी श्राद्ध (कोड 1928) — अपने कुल या अपनेसे सम्बद्ध अन्य कुलमें उत्पन्न किसी जीवके

प्रेतयोनि प्राप्त होनेपर उसके द्वारा संतानप्राप्तिमें बाधा या अन्यान्य अनिष्टोंकी निवृत्तिके लिये किया जानेवाला श्राद्ध

त्रिपिण्डी श्राद्ध है। इस पुस्तकमें त्रिपिण्डी श्राद्धका सिविध वर्णन किया गया है। मूल्य ₹१५ सन्ध्योपासनविधि एवं तर्पण बलिवैश्वदेव-विधि (कोड 210) पुस्तकाकार—नित्य सन्ध्या-

उपासना एवं तर्पण बलिवैश्वदेवविधिका मन्त्रानुवादके साथ सुन्दर प्रकाशन। मूल्य ₹६